डॉ.कौशल किशोर श्रीवास्तव की रचनाएँ 6



डॉ.कौशल किशोर श्रीवास्तव

जन्मतिथि: 15 सितंबर 1946

जन्म स्थान: विदिशा (म.प्र.)

प्रकाशित कृतियाँ

1. ट्यूबेक्टोमी एण्ड कास्टम (अंग्रेजी, 1980)
2. है प्यास अभी (गजल संग्रह)
3.सन्नाटा गहरा है, (गजल संग्रह)
4.आए न बालम (व्यंग्य संग्रह)
5.बाइज्जत बरी (व्यंग्य संग्रह)
6.हड़कंप (व्यंग्य संग्रह)
7.अखिलम, मधुरम (काव्य संग्रह)
8. प्रतिरोधक क्षमता (मेडिकल साइंस)
9. प्रति उत्तर(काव्य संग्रह)
10 मेरे सांई
11 गीता के औपनिषधिक आधार
12 देशी-विदेशी विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर लेख प्रकाशित

सम्मान- पुरस्कारः विभिन्न शीर्ष स्तरीय संस्थाओं से पुरस्कृत एंव सम्मानित

सम्प्रति: 1.भूतपूर्व सदस्य: मानव अधिकार आयोग

2.सदस्य: किशोर न्यायपीठ,छिन्दवाडा

3. शल्य चिकित्सक,

4. सेवानिवृत्ति सीएमओ (मुख्य स्वास्थ्य एंव चिकित्सा अधिकारी)

1 संरक्षक - पत्रकारिता कोश मंच छिंदवाड़ा

2. उपाध्यक्ष - जिला रेडकास समिति सोसाइटी छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

3. आजीवन सदस्य इंडियन मेडिकल एसोसिएशन

4. मानव तंत्र मानव अधिकार आयोग

अन्य - स्वतंत्र लेखन राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में,
संपर्क - 171 नोनिया करबल, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
पिन 480001

तन का व्यापार

हम अपने तन को बेच रहे इस पेट की आग बुझाने को
वह आते निकट हमारे हैं तन मन की आग मिटाने को
वे हमें नोचते हैं उसमें क्या सरकारी आपत्ति है
पैसों की खातिर और लोग बिकते हैं चार कमाने को
उनका तो टैक्स माफ होता हमसे तो टैक्स लिया जाता
और चाहे जब कुछ इंस्पेक्टर आ जाते हैं धमकाने को
कुछ पैसों के कारण ही हम उनके बच्चों को पाल रहे
ना जाने किन के बच्चे हैं , है हम असमर्थ बताने को
या तो हमको बाजार अलग सरकार मुहैया करवाए
या हमको जिंदा रहने दे या फिर छोड़े मर जाने को
अरे कौन हमारी बीमारी या तिल तिल कर मर जाने पर
बैठा है सिरहाने आकर कुछ सिर पर हाथ चलाने को
जैसे हो सड़े अंग तन के हमको तुम अलग बसाते हो
हमको भी तुमही बनाते हो फिर लगते हमें गिराने को
बचपन में ही क्रय करते हो या हमें चुराते हो घर से
करते हो रोज दलाली फिर हमरे तन को बिकवाने को
हम भूले बापू का साया मां की ममता क्या थी भूले
होती है भूले गुड़िया क्या लग जाते बदन जलाने को
हम तो यज्ञों की वेदी हैं क्यों हमसे नफरत करते हो
हम तो जलते रहते निशदिन रोको जलते परवाने को

डॉ कौशल किशोर श्रीवास्तव
171 विशु नगर , परासिया मार्ग
छिंदवाड़ा , मध्यप्रदेश 480001
मोबाइल 9424636145

मनोचिकित्सक

-डा ॅ. कौषल किशोर श्रीवास्तव

मन मन्दिर में खण्डित बुत कई पड़े हुये हैं
कुछ बाहर, कुछ मन के अन्दर गड़े हुये हैं।
उन्हें खोदता रहता हूँ, जब चुप रहता हूँ,
कुछ क ा ंटों कुछ हीरों जैसे जड़े हुये हैं।
कई तूफानों को रोका बाहर आने पर,
तब भी कुछ बाहर आने उठ खड़े हुये हैं।
मैंने कुछ रिष्ते तोड़े हैं उन्हें बचाने,
मेरे मन महलों पर वे बुत चढ़े हुये हैं।
पुरातात्विक विद कुछ आते हैं मन पढ़ने,
मनोचिकित्सा पढ़ कर वे सब बढ़े हुये हैं।

------रुरुरुरु--------

वे बेदिल

-डा ॅ. कौषल किशोर श्रीवास्तव

मिलने तक तुम मेरी मंजिल न थीं,
और फैसला आने तक कातिल न थीं।

मंजिल साथ हम सफर थी, मालूम न था,
लहरें ही साहिल थीं वे साहिल न थीं।
एक छलकती सुन्दर वे पैमाना थीं,
पर परहेजी आंख कहीं काबिल न थीं।
आईं जब वे भीड़ एक महफिल सी थी,
चलीं गई वे भीड़ एक महफिल न थी।
मुर्दा भी उठ जाता गर आ जाते वो,
होगी मजबूरी कि वे बेदिल न थी।

-----’’’-----

बं्ाध के बह
-डाॅ. कौषल किषोर श्रीवास्तव

जो कहना हो मन में कह,
मैं मुझमें तू तुझमें रह।
नदिया से बोला साहिल,
बहना हो तो बंध के बह।
हिम्मत हो तो फिर भिड़ जा,
ढ़हना हो तो कह के ढह।
म्ेारा उससे क्या झगड़ा,
ताकतवर है मुझसे वह।
लड़ना हो तो मिल के लड़,
सहना हो तो मिल के सह।

-----’’’-----

हो जाऊं
-डाॅ. कौषल किषोर श्रीवास्तव

वे जायें तो मैं अपने में खो जाऊं,
ख्वाब वायदा कर लें तो मैं सौ जाऊं।
उनकी मंजिल तो मेरी मंजिल न थी,
गाना उनका है क्यों मैं उसको गाऊं।
मेरे मन में मेरी मंजिल रहती है,
तेरे रस्ते रख उन पर मैं क्यों जाऊं।
मेरे दिल में चांद सितारे रहते हैं,

क्यों दिन में जागूं षब में क्यों सो जाऊं।
जिस्म तुम्हारा रूह मेरी ये मसला है,
जिस्म बिछा दे तू, फकीर में हो जाऊं।
-----’’’-----

दी नहीं जाती

-डाॅ. कौषल किषोर श्रीवास्तव

इतनी है पास पी नहीं जाती,
जरा सी फिर भी द्री नहीं जाती।
नषा मै का अलग ही रहता है,
मस्ती वह कहीं से नहीं आती।
तुम्हारे पास वह पैमाना नहीं,
जिसमें मस्ती उड़ेल दी जाती।
गोद साकी की हो नषा भी हो,
मौत ये हर किसी को नहीं आती।
नषे में साकी को तबज्जो दो ,
उससे बेरूखी सही नहीं जाती।

-----’’’-----

गुंजन के फूल

-डाॅ. कौषल किषोर श्रीवास्तव

ध्वनि के बिंतानों में
गंुजन के फूल,
ध्वनि के समुद्रों में
गीत रहे झूल।
कौव्वे की कांव कांव
कोयल की कुहक,
झुलाता पवन पर्ण
फूलों की महक।
खुषियां अस्तित्व की
इन सबका मूल,
ध्वनि के समुद्रों मंे
गीत रहे झूंल
तोतों की टेंटे तो

चिड़ियों की चहक,
वर्षा से झरनों के
स्वर रहे बहक।
वर्षा की पहली चोट
उड़ाती है धूल,
ध्वनि के बितानों में
गुंजन के फूल।

-----'''-----

बहुत है
-डाॅ. कौषल किषोर श्रीवास्तव

बस याद करना इबादत को बहुत है,
न मानना ही मेरे बिखरने को बहुत है।
छैनी हथोड़ा हाथ में एक बुत को बनाने,
जो हाथ में तेरे हो तो डरने को बहुत है।
जाना समन्दर तक बहुत लम्बा है रास्ता,
सन्तोष गिरना याद में झरने को बहुत है।
खूबसूरती तु खुदा की धरती पे आ गई,
बस मुस्कुराना तेरे संवरने को बहुत है।
न पैर सीधे कर सका जिन्दा रहा जब तक,
मरने पे एक कब्र पसरने को बहुत है।
-----'''-----

मकां के वालिद
-डाॅ. कौषल किषोर श्रीवास्तव

ऐसे लम्हे भी पास आते हैं,
हमारी रोषनी चुराते हैं।
दायरे रोषनी के मन में हैं,
परे हम देख नहीं पाते हैं।
खुद की तारीफ में जो डूबे हैं,
डूब कर जिन्दगी गंवाते हैं।
सलाह कर किसी को मत देना,
वक्त से लफ्ज उलट जाते हैं।
जमीं तुम्हारी और मकां उनके,
और वे आंख भी दिखाते हैं।
तुम्हारे नये मकां का वालिद हैं,
ये खण्डर हैं सब बताते हैं।
-----'''-----

क्या करना होगा

-डाॅ. कौषल किषोर श्रीवास्तव

क्या क्या मुझको करना होगा।
कितना मुझे संवरना होगा।।
कितनी तुम आजादी दोगे।
कितना मुझको डरना होगा।।
कब तक छत पर रह पाऊंगी।
कितना मुझे उतरना होगा।।
कितना घंूघट लेना होगा।
कब कब मुझ उघड़ना होगा।।
कितना मुझको चुप रहना है।
बतलाओ कब हंसना होगा।।
मन मंे तुम कितना बैठोगे।
कितना मुझे सिमटना होगा।।
कोई अजनबी जब आ जाये।
किस रेखा में रहना होगा।।
कितना मुझको हंसने दोगे।
कब कब मुझे सिसकना होगा।।
कितना जिन्दा रहने दोगे।
कितना अन्दर मरना होगा।।

-----’’’-----

आ गये

-डाॅ. कौषल किषोर श्रीवास्तव

आपने हमको पुकारा,
आंख मीचे आ गये,
कुछ हमारी चाह भी थी,
बगैर खींचे आ गये।
एक पत्थर उछाला था,
सिर पे कई आ के पड़े,
पत्थरों की मार से हम,
बहुत नीचे आ गये।
सब्ज बागों की पुकारों पर,
चले थे साथ में,
कुछ कदम चलने पे,
कांटों के बगीचे आ गये।
बागवां तुमको बनाया है,
तुम्हे मालिक नहीं,
मगर तुम सूखा बगीचा,
बगैर सींचे आ गये।
आस्मां को गिराने की,
सुगबुगाहट है गरम,
रेत के पैरों के नींचे,
कई गलीचे आ गये।

-----'''-----

अन्दाज बचे हैं
-डा ॅ. कौषल किषोर श्रीवास्तव

गजलें नहीं हैं फकत अब अन्दाज बचे हैं,
सुनने को अच्छी गजल हम मोहताज बचे हैं।
आकाष को देने चुनौती परिन्दे उड़े,
पंख तो सब नुच गये परवाज बचे हैं।
ख्वाहिष है पत्थरों की कि षीषे के घर मिलें,
पत्थर उछालने कहां जाबांज बचे हैं।
मौसम जहां बदले वहां फसलें बदल गई,
लहरों के साथ बहने वाले आज बचे हैं।
वे पर्दा राज हो गये चैराहे पे आके,
न हम बचे अब और न हमराज बचे हैं ै।
-----'''-----

मैं सोता हँ ू
-डा ॅ. कौषल किषोर श्रीवास्तव

सोता हूँ तो मैं अपने मे होता हूँ,
जग जाता हूँ तो अपने को खोता हूँ।
जग सागर है उसमें कभी तैरता हूँ,
कभी डूब कर बहुत लगाता गोता हूँ।
तुम कहते हो दुनिया मुझको सहती है,
मैं कहता हूँ मैं दुनिया को ढोता हूँ।
इस दुनिया के हर हिस्से में रोना है,
मैं भी बाहर हंसकर अंदर रोता हूँ।
दुनिया जिसमें सोती है मैं जागता हूँ,
दुनिया जिसमें जागती है मैं सोता हूँ।

-----'''-----

भोपाल गैस त्रासदी
-डा ॅ. कौषल किषोर श्रीवास्तव

उसी के जहां में उस वक्त ये सब हो रहा था,
हम जब मर रहे थे चैन से रब सो रहा था।
हम जब मर रहे थे वहां काजी भी खड़ा था,
वो हमसे पूछता है ये कहां कब हो रहा था?
रिसी थी गैस हम चूहों की माफिक मर रहे थे,
बचाने 'जैक' को षड़यंत्र एक तब हो रहा था।
न था राजा, वहां हुक्काम, न मुल्ला, पुजारी,
वहां भोपाल लाषों से लबालब हो रहा था।
हर जगह चींख घुटता दम था, और आंखों में मिरची
दिसम्बर दो चैरासी सन् में ताण्डव हो रहा था।
-----'''-----

चारों तरफ

-डाॅ. कौषल किषोर श्रीवास्तव

लहू लुहान जिस्म और घाव चारों तरफ,
तुम्हारे षहर में खन्जर के ताव चारों तरफ।
एक लड़के का बाप काइयां दलालों सा,
खड़े हैं लड़की वाले ले के भाव चारों तरफ।
मैं परेषान कोई मदद करने आता नहीं,
जहां देखूं दिखते हैं सुझाव चारों तरफ।
अगर धोखे से कोई गुनाहगार आ जाये,
आते हैं छुड़ाने, तब दबाव चारों तरफ।
तुम्हारा मुझसे इष्क दूसरा है, मालूम है?
दिखेगा कटे षब्दों का प्रभाव चारों तरफ।
-----'''-----

सरकारी तीर्थ यात्रा

-डाॅ.कौषल किषोर श्रीवास्तव

षिवराज सरकार की यह एक अच्छी पहल थी कि वृद्ध जनों को सरकारी खर्चे से तीर्थ यात्रा करवाये। उनकी ये सारी यात्रा में व्यवस्था भी बहुत अच्छी रहती है। पर इसमें कुछ खामियां भी देखी गई।

इन यात्राओं का लाभ अधिकतर अमीर लोगों ने उठाया जो स्वयं खर्च कर यात्रा कर सकते थे। इस कारण वे वंचित रह गये जो आर्थिक रूप से अक्षम थे। आधार कार्डों के बनने की स्थिति यह है कि देषवासियों को कार्ड नहीं बन रहे एवं विदेषी लोग आसानी से कार्ड बनवा लेते हैं। इससे विदेषी नागरिक सरकारी खर्चे पर जासूसी कर सकते हैं।

भारत एक धर्मनिरपेक्ष देष है। सरकारी खजाने में सभी को पैसा दिया जाता है पर तीर्थ यात्रा की सुविधा एक ही वर्ग के लोगांे को मिल पाती है। क्या ही अच्छा होता कि अजमेर षरीफ, सम्मेद षिखर जी, गोवा के चर्चों के लिये भी इस तरह की यात्रायें आयोजित की जातीं। अन्यथा अल्प संख्यकों के पैसों से मात्र बहुसंख्यकों के वृद्धजन तीर्थ यात्रा करें तो यह प्राकृतिक न्याय के खिलाफ है।

तीर्थ यात्रियों को भी सोचना चाहिये की तीर्थ यात्रा का पुण्य तभी प्राप्त होता है ज बवह अपने मेहनत के पैसों से की जाये, अन्यथा तीर्थ यात्रा का कष्ट तीर्थ यात्री उठा रहे और सारा पुण्य करवाने वाले अर्थात षिवराज सरकार को मिल रहा है।

सरकारी खजाने से भुखमरी कम की जाये , गरीबी कम की जाये गरीब किसानों के कर्जे माफ किये जाये, नये उद्योग स्थापित किये जाये, बेरोजगारी मिटाई जाये या अन्य जन कल्याणकारी कार्य किये जाये, पेन्षनरों की पेन्षन बढ़ाई जाये तो बात समझ में आती है पर मुफ्तखोरों को तीर्थयात्रा करवायी जाये यह बात पचती नहीं। यह जो अरबों रूपया पानी में बहाया जा रहा है इसके बदले 'वैट टैक्स'' कम किया जाये तो सार्वजनिक मुद्रा का ज्यादा सदुपयोग होगा।

माँ नर्मदा के प्रभाव को कौन नहीं जानता? वह कामधेनू है। पर उनकी परिक्रमा सरकारी खर्चे पर की जाये यह षायद माँ नर्मदा भी नहीं चाहती होंगी। यह मुफ्त में करोड़ो लोगों को तीर्थ यात्रा करवाई गई यह राषि सार्वजनिक की जानी चाहिये। हां, यदि षिवराज सरकार व्यक्तिगत पैसों से मुफ्त की तीर्थ यात्रा करवाती तो अच्छी बात थी।

अपना हिन्दुस्तान अलग है

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

हम सब तो हैं भारतवासी
वे रखते पहचान अलग।
अपना हिन्दुस्तान अलग है
उनका हिन्दुस्तान अलग।।
वे उड़ते एरोप्लेन से
हम सब उनके रन वे हैं।
वे मक्खन हम मठा सरीखे
हम पर अमर बेल वे है।।
वे तो हैं भगवान आज के
अपने है भगवान अलग
अपना हिन्दुस्तान अलग है
उनका हिन्दुस्तान अलग
उनका हैं दुकान माल में
अपनी हाटों गांवों में
उनको ठन्डा ए.सी. रखता
अपनी ठंडक छांवो में
सड़कें अपनी क्रीडागंन है
उनके हैं मैदान अलग
अपना हिन्दुस्तान अलग है
उनका हिन्दुस्तान अलग ।।
उनका भारत कन्सर्टों में
अपना है खड़तालों में।।
आर्ट गेलरी में वे घूमें
हम घूमें चैपालों में ।।
हम है उनसे अनजाने से

वह हमसे अनजान अलग।
अपना हिन्दुस्तान अलग है
उनका हिन्दुस्तान अलग॥
अपना भारत खेतों में हैं
उनका भारत शहरो
वे खुश स्वीमिंग पूलो में हैं
हम नदियों की लहरों में
कुछ तो हम सीधे सादे हैं
कुछ हैं वे बेईमान अलग
अपना हिन्दुस्तान अलग है
उनका हिन्दुस्तान अलग॥
गन्दी बस्ती में घर अपने
साथ जानवर रहते हैं।
उनके कुत्ते तक नखरो से
अलग घरों में रहते हैं॥
हम गुलाम उनके कुत्तो के
वे ऊपर इंसान अलग।
अपना हिन्दुस्तान अलग हैं
उनका हिन्दुस्तान अलग॥
वे जिन्दा रहते मरते हैं
शेयर के बाजारो में
अपना जीना मरना तो है
खलिहानों में हारो में
अपनी लाश खेत में जलती
हैं उनके श्मशान अलग।
अपना हिन्दुस्तान अलग है
उनका हिन्दुस्तान अलग॥
मृग मरीचिका हमें न्याय हैं
हमको वह मिलना मुश्किल
हैं कानून उन्हें खेलो से
चाहे फिर वे हों कातिल
हमें सजा जो मिलना ही है
उनकों है फरमान अलग।
अपना हिन्दुस्तान अलग है
उनका हिन्दुस्तान अलग॥
आजादी के हम रखवालें
चेरी उनकी आजादी।
वे आजादी के ऊपर है
नीचे उनके आबादी॥
जब संकट आता भारत पर
हो जाते श्रीमान अलग
अपना हिन्दुस्तान अलग है
उनका हिन्दुस्तान अलग॥
स्विस बैंक में उनका भारत
अपना है खलिहानों में
उनका डिस्कोथीकों में है
अपना वीर जवानों में

शान हमारी हिन्दी, उनकी
इंग्लिश में पहचान अलग।
अपना हिन्दुस्तान अलग है
उनका हिन्दुस्तान अलग।।

दधीचि की तरह

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

पेड़ चुपचाप कटता रहता है वह भाग नहीं जाता
या उसकी कोई शाखा काटने वाले को थप्पड़ नहीं मारती।
वह जंगल के तमाम पेड़ो को चीख कर इकट्ठा नहीं करता कटने पर,
न किसी से शिकायत करता, कटने पर।
पेड़ों के अखबार भी नहीं छपते
जिनमें वह कटने पर संपादक के नाम पत्र लिख सके।
उसे चीखना तो चाहिए जिवह होने वाले जानवर की तरह
पर नहीं चीख सकता।
मई जून की गर्मी में दोपहर को उसकी छाया में
बैठने वाले से वह नहीं कहता कि, "आगे बढ़ो बाबा"।
न ही बरसात में उसके नीचे आश्रय लेने पर वह
पत्तियां सिकोड़ता है। छाता बन्द करने की तरह
पक्षी उसे लावारिस भूखण्ड समझ कर मनमाने आकार के
मकान बनाते रहते हैं बगैर रजिस्ट्री के।
पक्षी चाहे चील हो चाहे मैना, वह भेदभाव नहीं करता।
वह चील से नफरत नहीं करता और मैना का पक्ष नहीं लेता।
पक्षी उसके फल खाते रहते है और बीट करते रहते है उस पर।
जानवर उसका आश्रय लेते रहते है।
मनुष्य उसको मार कर उसका फर्नीचर बनाते रहते है
वह चुपचान रहता है दधीचि की तरह।

अर्घ्य पुष्प उद्यान के

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

भुवन भास्कार को देते है,
अर्घ्य पुष्प उद्यान के।
वट पल्लव कीर्तन रत होकर
करते मधु स्वर गान के।।

कल कल झरने विरूदावली है
खग स्वर ढोल मन्जीरे।
साथ दे रहे हैं वन पल्लव
हिल कर धीरे-धीरे।।

या फिर वेद ऋचायें, पादप
मोहक सृष्टि वितान के।

भुवन भास्कर को देते है,
अघ्र्य पुष्प उद्यान के।।

वायु धूम्र वन कर ले जाती,
हवि रवि तक सादर।
रवि सुगन्ध स्वीकृत करता है
पुष्पों की सादर।।

वृक्ष लुटाते फल के दोने
मुक्त हस्त के दान के।
भुवन भास्कार को देते है,
अघ्र्य पुष्प उद्यान के।।

भ्रमर गान कर नर्तन रत है
पुष्प पुष्प तितली।
झूम रहे है" ताल मुग्ध दे
महुआ और कदली।।

परिवर्तन कर प्रकृति मनोहर
क्षितिज बढ़ाती ज्ञान के।
भुवन भास्कार को देते है,
अघ्र्य पुष्प उद्यान के।।

हिम झरनों से प्रसवित नदियां
दौड़ी यौवन को।
प्रसवित कुछ झरनों से होकर
मैदानों वन को।।

होकर कुसमित कनक किनारे,
इच्छित है सम्मान के।
भुवन भास्कार को देते है,
अघ्र्य पुष्प उद्यान के।।

कभी पुष्प विद्यार्थी जैसे
पंक्तिबद्ध जाते।
कभी झुके दिनकर से,
किंचित लगते शरमाते।।

कभी छूटते हों वसन्त के
खिंचते तीर कमान के।
भुवन भास्कर को देते है
अघ्र्य पुष्प उद्यान के।।

यादें

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

यादें, झपटतीं है गिद्ध की तरह
और नोच नोच कर खाती हैं जेहन को।
भगाने से भी नहीं भागती
वरन और तेजी से हठ कर के झपटती हैं।
और चिपकती हैं शरीर पर दवे चीटें की तरह।
यादें, मक्खी की तरह भिनभिनाती रहती हैं घावों पर
यहां से उड़ा दो तो
वहां बैठ जाती हैं
एक याद को हटाने के लिये
दूसरी याद से ढ़कना पड़ता है उन्हें।
कभी कभी दही की लस्सी की तरह
खट्टी मीठी भी होती है
उन्हें चूसने में मजा आता है।
फिर गिलास खाली होने पर
धुलने के लिये रखना पड़ता है।
यादें फुटबाल की तरह
एक दूसरे को सौंपती रहती है
सुबह से रात तक, हमें
फिर अगले दिन तैयार हो जाती है
पैरो से ठोकर खाने के लिये।।

संध्या से संध्या तक

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

पत्र लिखे प्राची ने संध्या को
लेकर उनको चला स्वयं दिनकर।
प्राची लिख कर स्वयं गुलाबी हुआ
संध्या रक्तिम हुई उन्हें पड़कर।।
सूर्य निशा का पीछा करता है
कई अनार रात्रि में खिलते हैं।
रोम रोम जगमग हो जाता है
कई कुसुम फिर कुसुमित होते हैं।।
रवि का चिंतन रजनी करती है,
मन वितान में खिलते मोती है।।
किरण किरण तारे बन जाते है
रवि की छाया शशि में होती है।।
उदित शिशिर से होकर ऋतुराजा
कुसुमाकर वन कुसुम खिलाता है
अनगित तारे यहां फूटते हैं
शशि रात्रि का खुद झुक जाता है।।

पसीने की बंूदो को इकट्ठा करने की होड़

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

मां उसकी कोख और दूध का हिसाब मांगती है
मेरी पसीने की बंूदो से/पत्नि भी पसीने की बंूदे मांगती है
उसके पसीने की गंध के बदले।
जब मैं दौड़ते दौड़ते हांफने लगता हँू
या थक कर बैठ जाता हँू
तो वे दोनो मुझे फिर सहलाती हैं
तैयार करती हैं

फिर दौड़ने के लिये
वे दोनो अधिक से अधिक
मेरे पसीने की बंूदे इकट्ठा करना चाहती है
मुझे आश्चर्य होता है कि
वे किस तरह मेरी पसीने की बंूदो को
बदल देती है
मकानों में या गहनों में
पत्नि जब मेरे पसीने की बंूदो को
उसके पसीने की बंूदो से मिला कर
बच्चे पैदा कर देती है
तब अचम्भा होता है मुझे।
फिर मेरे असम्भे को
वही संतान धीरे धीरे बड़ी होकर
तनाव और चिंता में बदल देती है।
और वह भी मेरी पसीने की बंूदो को बदलना चाहती है
उसके एश या उसके केरीयर में।
फिर होड़ होने लगती है उन सब में
मेरे पसीने की बंूदे इकट्ठा करने की

बसन्त

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

जो विषम वाण से सज्जित है
मकरध्वज रथ को साथ लिये।
मन पर शासन करने आया
ऋतुराज मदन को साथ लिये।।
स्वागत में पुष्पित पूर्ण धरा
कल कल झरना विरूदावलि है।
मदमस्त पवन है अस्त शस्त्र
सेना उसकी भ्रमरावलि है।।
उच्छंृखल बहती चलती थी
सकुचाकर लज्जावनत हुई।
किसका स्पर्श हुआ उसको
मर्यादित चंचल नदी हुई।
वृक्षो ने वस्त्र नये पहिने
सर मुकुर बना कर देख रहे।
कब लता उठे, वे झुकें जरा,
कब से उसका रूख देख रहे।
तन बोराये मन बोराये
बोराये आम, बगीचो में।

पदत्राण रहित वे नाच रहे
जो चलते सदा गलीचो में।।
पक्षी पेड़ो पर नाच रहे
नर्तन रत पुष्प हुये सारे।
ऋतुराज नचाता तितली दल
नर्तन रत जग को करता रे।।
हिम ऋतु में सोये सिकुड़े थे
हिम खण्ड पिघलने लगते है।
नदियों में अपने को खोकर
सागर तक चलने लगते है।।
वन श्री कर जागृत पुष्प खिला
केशरिया भाव जगाता रे।
फिर वन निःसंग क्यों सोंप उसे
वह प्रखर ग्रीष्म को जाता रे ?
उदयाचल शिशिर, ग्रीष्म पश्चिम
है ग्रीष्म पृष्ट और पूर्व शिशिर ।
है ऋतु वसन्त जलता दीपक
और शिशिर पिघलता एक तिमिर।।

शब्द

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

तुम्हारे अंदर हिल मिल कर रहते हैं शब्द
बाहर निकालने पर वे डर जाते है।
और छिपने लगते है यहाँ वहाँ
उन्हें मत काटो।
वे कटने पर
लहूलुहान हो जाते है।
उनमें जिंदगी होती है
बाहर निकलने पर वे।
यातो यंू ही हवा में तैर कर मर जाते है।
या छप जाते है पढ़े जाने के लिये।।
या सुने जाते है दूसरो के द्वारा
वे पढ़े या सुने जाने पर।
दूसरो का हिस्सा बन जाते है
यदि वहां जम गये तो
वहाँ वे बड़े होते है।
फिर बाहर निकलते है।
फल के रूप में फिर अन्य के।
द्वारा खाये जाने के लिये
पर वे तुम्हारे नहीं रहते
जब तुम उन्हें बाहर निकाल देते हो।।

डंडा और झंडा

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

डंडे के ऊपर झंडा है
झंडे के नीचे डंडा है।
जो डंडा है वह झंडा है
झंडा दरअसल में डंडा है।।
पैसा झंडा और डंडा है।
पैसा न हो तो अंडा है।
नेता संसद में झंडा है।
संसद के बाहर डंडा है।।
झंडे की जड़ में पैसा है।
डंडे की जड़ में पैसा है।
नेता की जड़ में पैसा है।
पैसा की जड़ में पैसा है।।
झंडा पैसें से आता है।
डंडा पैसे से आता है।।
डंडा पैसे से आता है।
अंडा पैसे से आता है।।
चूल्हा जलता कंडे से है।
अच्छी सेहत अंडे से है।
डंडा मोटा झंडे से है।
झंडा ऊँचा डंडे से है।।
कुर्सी के पीछे झंडा है।
कुर्सी के नीचे डंडा है।
ये कुर्सी क्या है डंडा है
उस पर गोबर का कंडा है
पक्षी का पिंजरा डंडा है।
भैंसों का रस्सा डंडा है।
गर डंडा न हो दूध नहीं।
मेहनत का कारण डंडा है।।
ये भूख पेट में डंडा है।
मुक्ति का कारण डंडा है।
ये महल खड़े डंडे से है।
जिल्लत का कारण डंडा है।।
अफसर का रूतबा डंडा है।
बचपन में शाला डंडा है।।
कानून खडे डंडे से है।
ये चमक तरक्की डंडा है।।

हंसने के पीछे डंडा है।
रोने का कारण डंडा है।।
मेरे अंदर पिटने वाला।
तेरे हाथो में डंडा है।।
भक्ति का कारण डंडा है।
मजहब का कारण डंडा है।।
मंदिर मस्जिद डंडे से है।
ऊपर वाला एक डंडा है।।
डंडा डंडो में जाता है।
डंडा डंडो को लाता है।
डंन्डम डंडा करवाता है।
डंडा मरघट ले जाता है।।
तुम न्याय पालिका से डरना।।
तुम नगर पालिका से डरता।
तुम मंत्री नेता से डरना।
कर्तव्य तुम्हारा है डरना।।

धड़कती सीपी में घड़कता हीरा

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

वह गर्भवती,
मजदूर महिला।
उदर के निचले भाग को,
हाथो से सहारा देकर,
उसके उदर में,
एक विकसित हो रहे,
संसार को सम्हाल रही है।

उसका चेहरा,
खून की कमी से पीला है।
पर उसकी आंखो में चमक है।
मानों उस मजदूर महिला के पास,
संसार का सबसे कीमती हीरा हो।
वह सम्हल सम्हल कर,
कदम रख रख रही है।
कि कहीं जरा सी भी ठोकर,
लगने पर उस स्त्रवटा का
निर्मित होता संसार,
रक्त स्त्राव के साथ गिर कर
नष्ट न हो जाये।
उसके उस निर्मित होते हुये।
संसार के लिये वह शेरनी बन कर
ब्रह्मना से भी लड़ लेगी।
उसके गर्भ में मात्र मूल्यवान हीरा नहीं हैं
उस धड़कती सीपी में
एक नायाब धड़कता हुआ हीरा है।।

मेरे अंदर

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

मेरे अंदर न जाने क्यों अंगारे जलते रहते हैं
ये जिस्म दहकता रहता है दिन रात सुलगते रहते है।।
मेरी जलती आंखो से नित ही धुआं निकलता रहता है
अंदर बाहर की लपटो से ये चेहरा झुलसा रहता है।।
चन्दा तारे मेरे अन्दर हर दम डरते से रहते हैं
कुछ रक्त उबलता रहा है, कुछ जंगल जलते रहते है।।
मेरे अंदर रिश्ते नाते हर दम थर्राते रहते हैं
दिल में तूफान मचलते है, पत्थर सन्नाते रहते हैं।।
कुछ धुंआ और कुछ धूल भरे दिल में सब धंुधले दिखते हैं।
आंखे पथराई रहती है, और आंसू बहते रहते है।।
करूणा को कुचला हिंसा ने हिंसा के अंधड चलते हैं।
चेहरे पर चाहे स्मित हो षडयंत्र मचलते रहते है।।
न वृक्ष हरे न कलरव है लाबा फैला मीलों तक है।
गरमी से तिड़की धरती है और तपती रेत क्षितिज तक है।।
कब सपना देखा याद नहीं सपनों में जाना भूल गया।

घर में घन चलते रहते है, मंदिर तक जाना भूल गया।।
कुछ हंसते चेहरे लाश हुये, जो बचे सहम कर ठिठक गये।
छोड़ा खग वृन्दों ने उपवन सब कलशें जल के तिड़क गये।।
दाबानल ने वन फूंक दिया लावा में हिम कण मत ढूंडो।
मैं लाश चलती फिरती यहाँ तुम मुझमें जीवन मत ढंूढो।।

कल्पना

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

कल्पना सच का भविष्य होती है
सच की जमीन पर एक विकसित
होता हुआ वृक्ष
कल्पना हालांकि सच का विलोम नहीं हैं
पर सच कल्पना का अनुलोम होता है
अगर सच नहीं होता
तो कल्पना नहीं होती तब
सच से अद्भुत तथ्य झूठ कैसे हो सकता है ?
असत्य तो सत्य की अनुपस्थिति है
सत्य को नकारना है
कल्पना में सत्य के अंश होते है
मगर सच
आंशिक नहीं होता या तो होता है
या नहीं होता
कल्पना सच का भविष्य होती है
सच की जमीन पर
लगा हुआ एक वृक्ष।।

जैसे

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

फूलों के पाखंुर सी तितली।
उड़ती फूलों से फूलों पर।।
पेंगें लेती हो षोडषियां।
जैसे सावन के झूलो पर।।
लड़की तितली सी उड़ती है
घर के कमरों से कमरों में
इठलाती पानी की भंवरे
जैसे कूलो से कूलो पर।।
शाला से घर आकर बच्चे
अधम करते खेल रहे हैं ?
मस्त हवा में जैसे नावें।
डोल रही हो मस्तूलो पर ।।
सावन भादों के महिने में।
छंटते बादल कभी कभी हैं।।
इंस देती है माता जैसे।
बच्चों की छोटी भूलो पर।।
जब से प्रीतम छोड़ गये हैं।
मन का उपवन उजड़ा है।।
विरहिन को लगता है ऐसा।
जैसे चलती हो शूलों पर।।
फेंक दिया है स्कूलो का।
बस्ता ‘‘पापा’’ के कंधे पर।।
नहीं सोचना कल तक कुछ भी।
घर आकर के स्कूलो पर।।
उछल रहे बंदर बगिया की।
इस डाली से उस डाली पर।।
जैसे बच्चे उछल रहे हों।
स्कूलो के ‘‘स्टूलो’’ पर।।

भूख

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

चांद पर नील आमर्◌्स स्ट्रांग नहीं।
उतरा था भूख उतरी थी।।
भूख ही “स्पेस शटल” के रूप में।
पृथ्वी का चक्कर लगाती हैं।।
भूख मजदूर को फेक्ट्री से।
और शिशु को मां से चिपकाये रखती है।।
भूख प्रतिस्पर्धा और विश्वविद्यालय है।
भूख झोपड़ी और अट्टालिका है।।
सैनिक और देश है भूख।
वही दर्शन है महात्मा है, और उपदेश है।
विपन्नता है और सम्पन्नता है।
प्रयोगशाला और विज्ञापन है।
ऊँचे उठने के विचार भूख से पैदा होते हैं।
ग्राहक भी वही है और बाजार भी वही है।।
वहीं अहं और साहित्य है।
भोजन, प्राणी को शाश्वत और आक्रमक।।
भूख से अलग रखने का साधन है।
भूख ही हन्टर और प्रताड़ना है।।
भूख धोखा और चोरी तो है ही।
सत्य और ईमानदारी भी वही है।।
भक्ति और प्रेम भी वही है।
वही माया और ईश्वर है/भूख ईश्वर है।।

भ्रमर गान

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

खिले पुष्प की तश्तरियों पर।
भ्रमर तितलियां चखते व्यंजन।।
मधुमक्खी के साथ घट रहे।
खाद्यों पर करते है चिंतन।।
जंगल फर्नीचर में बदले।

शेर हिरण गुम कहां हो गये।।
क्रेशर धूल उड़ाते जाते,।
रात दिवस करते है, कन्दन।।
नदियां सूख गई नालों में।
मछली मगरमच्छ रोते हैं।।
करते है जो वायु प्रदूषित।
उनका होता है अभिनन्दन।।
खग वृन्दों के कटे ठिकाने।
धरती रेगिस्तान हो रही।।
कितने वंश हुये निर्मूलित।
नष्ट हुये कितने ही जीवन।।
पहले कितना श्रेष्ठ समय था।
धरा एक संगीत सदन थी।।
झरने खग गाते रहते थे।
पूरी धरती एक मधुबन थी।।
यहां क्षितिज से वहां क्षितिज तक।
अब सीमेन्ट शिखर फैले हैं।।
या उनकी अपशिष्ट झुग्गियां।
मानव और प्रकृति में अनबन।।
जिस शाखा पर बैठे मानव।
उसका उच्छेदन करते हैं।।
निश्चित नहीं हमारे वंशज।
कब तक कर पायेंगे गुंजन।।
जाने कम क्या हुआ हवा में।
जरा जरा में थक जाते हैं।।
भ्रमर तितलियां मधुमक्खी सब।
लौट गये करते ये भन भन।।

सरकारी अफसर

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

सरकारी अफसर
पीली बत्ती की कार में कितना गौरवशाली लगता है
जब वह आपके नमस्ते का जवाब दे देता है,
तब आपका सिर गर्व से ऊपर उठ जाता है
पन्द्रह अगस्त या छब्बीस जनवरी को ध्वजारोहण
करते समय वह राष्ट्रपति का प्रतिरूप ही लगता है
जब वह किसी समस्या के बारे में आपके कंधे
पर हाथ रखकर चर्चा कहता है तब आप सचमुच गंभीर हो जाते है
कभी कभी वह आपसे उसकी कार में बैठने को कहता है
तब आपके साथी आप जलने लगते है
पर वहीं विश्वास लिये जब आप आपकी
किसी समस्या के लिये मिलने जाते है
तब उसके दरवाजे का चपरासी आपको रोक लेता है

आप उससे किंचित अकड़ कर कहते है
कि साहब से कहो कि हम उनसे मिलने आये है
जवाब में वह आपको एक पर्ची पकड़ा देता है
जिस पर आपको आपका नाम पद एवं
मिलने का मकसद लिखना होता है
अंदर ले जाकर वह पर्ची वह साहब के सामने रख देता है
साहब आपको इंतजार करने को कहलवा देते है
तब आप मायूस हो जाते है आप उन लोगो की पंक्ति में खड़े हो जाते है
जो पहले से ही इंतजार कर रहे होते है
आप कसमसाते रहते है पर आपका नम्बर नहीं आता
है तो अन्दर से डरे हुये और ऊपर से
आत्म विश्वास लिये अंदर जाते हैं।
वह आपसे बैठने को नहीं कहता है
वरन संक्षेप में आपकी समस्या बतलाने वो कहता है
क्योंकि उसे शीघ्र ही एक महत्वपूर्ण बैठक की
अध्यक्षता करने जाना होता है
तब आपके मंुह से बलात निकल जाता है
कि आप यू हीं मिलने आये थे।

होली हटक्कली

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

सज धज वह होली में आई।
मन की चटकी एक चटक्कली।।
मैनें सोचा की अब बीबी।
फटका देगी एक फटक्कली।।
चलें मायके इस होली पर।
बोली मटकी जरा मटक्कली।।
मैनें उसको मना किया तो।
गले लटक गई मेरी लटक्कली।।
मै बोला खर्चे से डर तू।
सुन मेरी तू अरे मटक्कली।।
होटल में चलते है खाने।
मेरी लटकन जान लटक्कली।।
गुस्सा होकर रूठ गई वह।
पैर पटकली रही पटक्कली।।
जाने कब वह बाहर निकली।
और सटक गई कहीं सटक्कली।।
मेरे मन में चिंता जागी।
कहां अटक गई हाय अटक्कली।।
थाने पहुँचा रपट लिखाई।
भटक गई हैं कहीं भटक्कली।।
दस हजार दो दिन में फुक गये।

झटका दे गई मुझे झटक्कली।।
पर दो दिन में वापिस आ गई।
फटकारा मेरी फटक्कली।।
वह रोकर बोली तुमको मैं।
रही खटकती सदा खटक्कली।।
मैं तो रही मायके दो दिन।
चाहे तो कहं दो सटक्कली।।
मैनें सुन कर माफी मांगी।
भूल गटक मेरी गटक्कली।।

प्यारी बेटी

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

चल मेरी प्यारी बेटी हम भीख मांगने चले।
पहले इन गोरे चेहरे पर काला रंग मल लें।।
काला चेहरा कुछ गोरो से हमें बचाता है
गोरे चेहरे से एक बच्चा फिर आ जाता है
कुछ अमीरजादो से अपना पेट बचा कर चलें।
चल मेरी प्यारी बेटी हम भीख मांगने चले।।
भाई बहन तेरे अमीरजादो के बच्चे हैं
चालाको के बच्चे हैं पर दिल के सच्चे हैं
भीख मांगते अब विधना के लेखे नहीं टलें
चल मेरी प्यारी बेटी अब भीख मांगनें चलें।।
फटे हुये कपड़ो में से तन बाहर न निकलें।
कहीं भेडिये कोई अपने पीछे नहीं चलें।
डाकू कहीं लूटने तन को देखो न मचलें।
चल मेरी प्यारी बेटी हम भीख मांगने चलें।।
देख शाम के पहले ही तू घर पर आ जाना
किसी तमाशे या मेले में मत तू खो जाना
अपनी इज्जत बची रही तो घर अपने सम्हले।
चल मेरी प्यारी बेटी हम भीख मांगने चलें।
कचरों के ढेरों पर छोटी झोली लटकायें
झूठी रोटी के टुकड़ो को ढेरो से लायें।
जिससे तेरे मेरे और बच्चो के पेट पलें।
चल मेरी प्यारी बेटी हम भीख मांगने चलें।
दुत्कारे कोई बिल्कुल न बुरा मानना तू
कोई पत्थर भी मारे तो मत घबराना तू
नहीं पुलिस थाने जाना है इतना तय करलें।
चल मेरी प्यारी बेटी हम भीख मांगने चले।।।
जो भी मिल जाये तुमको वह चुप से रख लेना।
सड़े हुये खाने को पत्थर पर न रख देना
कहीं फेकने पर देने वाले न हाथ मलेें।

चल मेरी प्यारी बेटी हम भीख मांगने चले।।

कचरों के ढेरो पर बेजा कुत्ते आयेंगे।
भोकेंगे वे हर टुकड़े पर हमें डरायेंगे।
भलें काट लें वे हमको पर टुकड़े हमें मिलें।
चल मेरी प्यारी बेटी हम भीख मांगने चले।।

जैसे वर्षो से भूखी हो चेहरा कर लेना
सिक्के अगर मिले झट से खींसे में धर लेना।।
सिक्को की खातिर लेकिन हम ज्यादा न मचलें।
चल मेरी प्यारी बेटी हम भीख मांगने चले।।

मंदिर मस्जिद के आगे कुछ मुस्टंडे होंगे
हमें भगाने उनके कर में डंडे भी होंगे
जिससे हम और कुत्ते उन जगहो से दूर टलें।
चल मेरी प्यारी बेटी हम भीख मांगने चले।।

हम न मुसलमान न हिंदू बस भीखमंगे हैं
कपड़ो के नीचे मो सब इंसा ही नंगे हैं
अल्लाह और राम के झगड़ो से हम दूर चलें।
चल मेरी प्यारी बेटी हम भीख मांगने चले।।

ऐसा काम नहीं करना कि अस्पताल जाओ।
और वहां से एक बच्चा तुम लेकर आ जाओ।
मंहगाई से ज्यादा बच्चे हमसें नहीं पलें।
चल मेरी प्यारी बेटी हम भीख मांगने चले।।

हम अमीर की नहीं जादियां बच्चे फिकवां दें।
कुत्तो से खाने को दिल के टुकड़े गिरवा दें।।
इससे तो अच्छा है कि हम पहले से सम्हलें।
चल मेरी प्यारी बेटी हम भीख मांगने चले।।

तू कुछ और बड़ी हो जा फेरे पड़वा दूंगी।
किसी भिखारी से तेरी शादी करवा दंूगी।।
अभी जुगत एसी कर जिससे भाई बहन पलें।
चल मेरी प्यारी बेटी हम भीख मांगने चले।।

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

जो पलने में झूल रहा है
उस शिशु का विस्तार ही विश्व है
उसका रूठना और गुस्से में रोना
शाखा प्रशाखाओं से बढ़ कर
डंडा, हन्टर, पिस्तौल सेना और बम हो जाता है
उसका खिलखिलाना
पल्लचित हो कर
फल, तितलियां, झरने और दैहिक आकर्षण
में बदल जाता है
उसकी भूख
दूध, खेत, उधारी, भिक्षा
व्यावार और बैंक में बदल जाती है
इन्टर, बम, पिस्तौल तितलियां खेत
और बैंको का बीज
वह पलने में पल रहा है।

भय के कारण

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

भय के कारण ही मृत्यु पागलों की तरह,
यहां वहां घूमती है/वनस्पति, जानवरो मनुष्यो
उपग्रहो ग्रहो तारो समय और नीहोरिकाओं का
अस्तित्व मिटाते हुये।
मगर उसकी पीठ पर भी
कोई चाकू की तरह लगा है
मृत्यु के भय के कारण ही
पशु पक्षी और मनुष्य
शारीरिक संबंध बनाते है।

विषाणु और जीवाणु
विखण्डन करते है।
ग्रह उपग्रह और सितारे
तिमिर छिद्र की ओर दौड़ते है।
शायद मृत्यु ही सृष्टि का कारण है।
पृथ्वी उसके डर से
धुरी पर घूमती है
और सूर्य से एक दूरी रख कर
दासी की तरह उसका चक्कर लगाती है।
सूर्य, मृत्यु के डर से ही
जलता रहता है और
घूमता रहता है पागलों की तरह।
अग्नि किसके डर से
खाती रहती है वह सब
जो उसके सम्पर्क में आता है ?
तूफ़ान किसके डर से
वायुमंडल में
विप्लव मचाते हुये घूमते रहते है,
उजाड़ते हुये जीवन ?
योगी किसके डर से
योग प्रवृत होते है ?
मृत्यु तो
अतृप्त भूख के कारण
विक्षिप्त सी दौड़ती रहती है।
सबको आहार बनाते हुये
पर वह किसका आहार है ?
किस के भय से बचने
यहां वहां दौड़ती रहती है
कहीं पूरी सृष्टि तो
अपने अस्तित्व के भय के
कारण ही तो नहीं
भाग रही है यहां से वहां
बौखलाई सी ?

सपने में तलैय्या मोहल्ला

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

वह तलैय्या मोहल्ला,
जिसे मैनें पिछले चालीस साल से नहीं देखा है,
मेरे सपनों में कभी कभी आ जाता है।
हालांकि वह मेरी लम्बवत याददास्त में
बहुत नीचे दफन हो गया है।
पर सपने में वह फैल जाता है
एक ड्राइंग शीट की तरह
जिसमें एक घाटी से नीचे उतर कर,
मैं देखता हँू,
खुद को उन महिला मित्रों के साथ,
जो मेरे साथ हैं, पर
जिन्होने ततैय्या मोहल्ला का
नाम भी नहीं सुना।
पर मुझे स्वप्न में आश्चर्य भी
नहीं होता कि वे अलग अलग
कालखण्ड की चीजे
अलग अलग जगहो की
महिला मित्रे ? चालीस साल पहले के
तलैय्या मोहल्ला में कैसे इकट्ठा हो गई ?
मैं उन महिला मित्रों के साथ
पुलिस चैकी तक उतरता हँू
जहां से एक रास्ता जाता है
कमला पार्क की तरफ
और दूसरा बुध्0ावारी तक।
मैं उन रास्तो पर नहीं मुड़ता
और घूमता रहता हँू
बजरिया में।

यहां महिला मित्रें अचानक गायब
हो जाती हैं
और मैं उस किराने की दुकान पर
पहँुच जाता हँू,
जिसके सामने
प्रेस करने वालो की दुकान है।
और वहां से एक रास्ता
छोटे तालाब तक जाता है।
बीच में एक होटल भी है।
जो अब आती है सपने में।
उसके सामने बड़े स्पष्ट रूप से
जूतो पर पालिश करने वाले दिखते हैं।
मेरे सपने का तलैय्या मोहल्ला
मेरी सुविधानुसार होता है।
जिसमें मैं किसी भी दुकान को
उठाकर कहीं भी रख देता हँू।
और किसी की काल के व्यक्ति को
मैं स्वयं चलाता रहता हँू।
मेरे सपने के उस छोटे तलैय्या मोहल्ले
में। जिसमें इब्राहीम पुरा तक
समा जाता हैं।

मकड़ी के जाले

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

बहुत जाले है इस जंगल में,
हरेक जाले में फंसा है एक कीड़ा।
जाले मकड़ी से ताकतवर होते है।
हालांकि मकड़ी उन्हें बनाती है।
बगैर जाले के मकड़ी एक चीटीं से भी डरती है।
मकड़ी जाले के बगैर नहीं रह सकती।
जिंदा रहने के लिये ही मकड़ी जाला बुनती है
कई कीड़ो का शरीर जरूरी है एक
मकड़ी को जिन्दा रहने के लिये।
मकड़ी का जाला ही फंसे रहने वालो के लिए कानून होता है।
उससे जो फंसा वह जान से गया।
जब कोई कीड़ा फंसता है
तो जाला मकड़ी को बता देता है।
फिर प्रसन्नता पूर्वक मकड़ी उस तक जाती है।
और फंदा बुन कर देती है मजबूत फंदा उसके चारो तरफ।
कीड़ा उससे बाहर निकलने के फड़फड़ाता है।
तो फंसता ही जाता है।
मकड़ी तब तक आराम करती है।
फिर उस कीड़े का जीवन द्रव,
आनन्द से चूसती है उस कीड़े का छिल्का बन जाने तक।
बहुत से कीड़ो के छिलके होते है एक पुराने जाले में।
उनमें कमजोर कीड़े तो फंस जाते है,
पर जानवर उन्हें कुचल देते है।
जाले अगर कीड़ो से जंगल साफ करने के लिए होते तो
एक बाता बात थी। पर वे तो
मकड़ी को आनन्द देने के लिये होते है।

प्रजनन और प्रजातियाँ

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

हम प्रकृति से बलात्
प्रजनन करवाते हैं
बीजो से
हरियाली से
और जानवरो से।
और उन्हें कृत्रिम रूप से

हष्ट पुष्ट रखते हैं।
हमारे प्रजनन को नियंत्रित करके।
जिससे उनके शरीर की हत्या कर सके
और खा सके
हमारी बची हुई प्रजाति के।
शरीर हष्ट पुष्ट रखने के लिये।

दौ, ''मैं''

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

मेरे अंदर दो ''मैं'' हैं।
एक गौण और एक मुख्य।
लघु ''मैं'' मुख्य ''मैं'' की हर बात में
गलती निकाला रहता है।
यदि लघु ''मैं'' हार जाता है
तो मुख्य ''मैं'' को आत्महत्या के
लिये प्रेरित करता है।
अन्यथा दब जाता है फिर फिर
उभरने के लिये
सच तो यह है कि
वह गौण ''मैं'' मुख्य ''मैं'' बनना
चाहता है।
गौण मैं।
हालांकि मुख्य मैं के अंदर रहता है
पर उससे अलग रहता है।

बंधन कुछ ढीले होने दो

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

अब तक का समय धं◌ुधलका था,
अब तक न आंचल ढलका था।
अन्तस न बाहर झलका था।
तम कुछ चमकीले होने दो।
बंधन कुछ ढीले होने दो।

दम घुटता है, मत अधिक कसो।
कुछ दूरी रख कर जरा बसो।
मत तपते सूरज से बिहंसो।
दिन भी सपनीले होने दो।
बंधन कुछ ढीले होने दो।

ये माना कि तुम कुपित नहीं
इतना चुप रहना उचित नहीं
कुछ दिन से बिल्कुल मुदित नहीं,
रिश्ते गर्वीले होने दो।
बंधन कुछ ढीले होने दो।

मन भटका नहीं बहुत दिन से।
न बाहर गया बहुत दिन से।
अनुशासन बद्ध बहुत दिन से।
पल मत शर्मीले होने दो।
बंधन कुछ ढीले होने दो।

आंखो में कितने अंगारे।
रेतीले दृष्य भरे सारे।
मुझ से मत दूर बहुत जारे।
नयनों को गीले होने दो।
बंधन कुछ ढीले होने दो।

आप-कवि

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

यदि आप कविता हैं
तो बेतुकी कविता न बनें।
जिसके कहने में कोई तुक नहीं।
और यदि आप तुकान्त कविता हैं।
तो तुकें खींच तान कर मिलाई गई हैं।
जिससे मात्रायें गड़बड़ा गई है।
अगर आप गद्य हैं।
जो ऐसे गद्य हैं।
जिसका शीर्षक
मुख्य भाग से अलग है।
जिससे शब्द ही शब्द है,
अर्थ नहीं।
काश आप निरर्थक न होते।
आप में से अर्थ नहीं निकल सकता।
शब्दो का क्या करना।
क्या ही अच्छा होता कि।
आप शान्त रस होते।
मगर आप तो वीभत्स रस हैं।
जिसका लेखक भी उससे डर जावे।
आप एक एसी किताब हैं
जिसकी जिल्द तो सुनहरी है।
पर पन्नों को दीमक खा गई है।
काश आप सुन्दर कविता होते।
सार्थक गद्य होते, शांत रस होते,
आप पठनीय पुस्तक होते।

प्राण चक्र

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

मुझे प्राणदान देने के बदले।
आप मुझसे एक हत्या करवा देते है।
फिर कुछ दिनो का प्राण दान दे देते हैं।
इस तरह कुछ पलो का प्राण दान देते देते
आप मुझसे कई हत्यायें करवा चुके हैं।
पर अब मुझे लगता है कि
हर हत्या के बदले,
मैं आत्महत्या ही कर रहा था।
अब मुझ से आगे कोई हत्या न होगी।
अब मैनें मर मर कर जिन्दा रहने का
साहस जुटा लिया है।

गांधी फिर कब आओगे ?

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

मोहनदास कमरचंद जी की,
देश प्रेम की आंधी थी।
पीछे देश खड़ा मर मिटने,
एसी हस्ती गांधी थी।

इसीलिये तैयार हुये,
नेहरू जाने को जेलो में।
मालूम था सिर दे देंगे

पीछे सब खेलों खेलों में।
मालूम था कि थे पटेल,
मौलाना किदवई जान लिये।
वल्लभ भाई के पीछे,
मिटने कितने अरमान लिये।
लिये जेब में घूम रहे,
फांसी की रस्सी भगत सिंह।
कितने मिटने को आतुर थे
बिस्मिल राजा, रणजीते सिंह।
सावरकर बन कर के मशाल
थे अंधकार में चमक रहे।
इतिहासो के पन्नों में
आजाद, गोखले दमक रहे।
कितने थे गफ्फार और,
कितने सुभाष की आंधी थी।
भूल समझाने में होगी
आजादी केवल गांधी थी।
कितनी लक्ष्मीबाई कितने
भीमराव से गांधी थे।
कितने मंगल पांडे शेखर
ब्रिटिश राज्य में आंधी थे।
मरने और मारने का
जज्बा था हक को पाने का।
सीने में थी देश भक्ति
होंठों पर उसको गाने का।
घर घर में थे रमन यहाँ
और घर घर में टैगोर यहाँ।
हर घर में थे बोस हरेक घर
आजादी का शोर यहाँ।
दर्शन का भंडार देश,
और थे शहीद भी गली गली।
राजा मोहन राय हरेक घर,
हरिशचन्द्र भी गली गली।
कई विवेकानन्द यहाँ थे
दर्शन और विज्ञान भरे।
कटने को आतुर शीशे में
न्याय और विज्ञान भरे।
थे कुरान ओर गीता पर शिर
साथ-साथ कटने वाले।
गुरूवाणी और बाइबिलो पर
एक साथ मरने वाले
कितने ही मर गये लिये
सपना अपनी आजादी का।
जला दिये कपड़े विदेश के
बाना पहना खादी का।
अंग्रेजो के खड़े सामने
हाथ नमक और नील लिये।

जंगल में स्वागत करने को
खड़े धनुष थे भील लिये।
पर गोपाला चारी को
माउन्टबेटन ने क्या सोंपा ?
भ्रष्ट प्रशासन जातिवाद का
छुरा पीठ पर एक घोंपा।
गांधी का वादा था शासन
अंतिम जन तक जायेगा
क्या मतलब था दमन प्रशासन
का उन तक ले जायेगा।
देश खींच ले आये नेता
रिश्वत के चैराहे पर।
स्वच्छ वोट की नदी पटक दी
देखा गन्दे नाले पर।
राष्ट्रपिता झूठे कर डाले
देश के इन नेताओ ने।
लिया खजाना लूट मंत्रियों
ने और नौकर शाहों ने।
डरते हैं इमानदार,
इस प्रजातंत्र में गांधी जी।
उन पर बेईमान करते हैं।
क्रूर प्रशासन गांधी जी।
चील भेड़िये बेहद खुश,
लाशों की उनको कमी नहीं।
गेहँू दाल गगन पर हैं
दिल्ली के दिल में नमी नहीं।
वे रेशम खादी किधर गये।
हो गई कहां मलमल गायब ?
छोड़ गये खेतों को बच्चे
बन कर के छोटे साहब।
सतियों के जलने के बदले
जलती बहुयें सधवायें।
देश जलाते मंत्री नेता
बैठें है सब मंुह बायें।
हर दिन ट्रेनों की दुर्घटना
हर दिन हत्या बलात्कार।
हर दिन लूटमार और चोरी
हर कोने में चीत्कार।
हिन्दी कम्प्यूटर में गुम गई
गाली ही साहित्य बनी।
भाषाओं से प्रान्त बट गये
है आपस में तना तनी
किसकी रक्षा करते सैनिक
सीमा पर शहीद होकर।
वे जो देश बेचते हैं या
जो पग पग खाते ठोकर।
सच के अब प्रयोग बापू जी

बतलाओं क्या कर लेंगे।
सचमुच के सत्याग्रह पर तो
दुष्ट जान ही ले लेंगें।

किस किस मुद्दे पर सत्याग्रह
बतलाओं बापू करलों।
कई छेद है इस चादर में
किस किस को बापू ढकलें।

लगता है डर गये आप भी
अब भारत में आने से।
कैसा देश मिला हम सब को
आजादी के आने से।

आजादी के किस्से बापू
हुये किताबों से गायब
लोकसभा के भ्रष्ट प्रतिनिधि
नग है देश भक्त नायब।

कुछ तो लूट रहें हैं दुश्मन,
कुछ ये नेता गांधी जी।
दिया प्रशासन ने मौका
जनता को बिकने गांधी जी।

अंधकार में कोई किरण
न तुम हो न इतिहास बचा।
यहाँ बचे हर जगह लुटेरे,
नहीं हास परिहास बचा

धीरे धीरे मरती जनता
धीरे धीरे देश यहाँ।
इन हालातों में क्या गांधी
बच पायेगा देश यहाँ।

एक सूरज एक चंदा

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

दिन हजारों जिये
बे वजह क्या जिये।
एक पल प्यार का
जो जिया जी लिये।।

बात करते रहे
आप संसार की।
जिक्र खुद का हुआ
होंठ क्यों सीलिये।

चांद तारे बहुत
आसमां पर सही।
हम तो मांगेगे सूरज
सहर के लिये।

एक सूरज,
जमी आस्मां के लिये।
एक चंदा
हमारे तुम्हारे लिये।

निराश कर दिया

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

न जाने क्या साजिश करके
मुझको जिन्दा लाश कर दिया।

खुद पगडन्डी बना हुआ था,

मैं मंजिल को जाने वाला।
मेरी तन्मयता से जल कर,
मुझे पुरस्कृत क्यों कर डाला।।
मुझमें पथ में भेद डालकर,
तुमने मुझे हताश कर दिया।
न जाने क्या साजिश करके
मुझको जिन्दा लाश कर दिया।।
करके अपना काम दिवस का,
गपशप करता था अपनो में।
डूबा हुआ बहुत खुश था मैं
वर्तमान में और सपनों में।
मुझको एक उपाधि देकर,
अपनो में आकाश का दिया।
न जाने क्या साजिश करके
मुझको जिन्दा लाश कर दिया।।
बिखरे कुन्दन को चुन चुनकर,
एक बना मैं आगे आया।
मुझे व्यवस्था में शामिल कर,
तुमने दुहरा दष चलाया।
मुझे अलग करके धरती से।।
एक दम मुझे निराश कर दिया
न जाने क्या साजिश करके
मुझको जिन्दा लाश कर दिया।।

ढांचा बदलूँगा

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

पल पल के घुटने से बेहतर
मैं एक पल की मौत मरूँगा
गुपचुप संकेतो से अच्छा
विद्रोही क्रन्दन लगता है
उलझे जालो से तो अच्छा,
सीधा सा बंधन लगता है।।
चाटुकारिता के करने के
बदलें में लोहू बरसँूगा
पल पल के घुटने से बेहतर
मैं एक पल की मौत मरूँगा
दिन भर की दसबार मौत से

अच्छा है एक दम से मरना।
तिल तिल कर मरने से बेहतर,
अच्छा है एक हत्या करना।
डरूँ व्यवस्था से क्यों कर मैं,
मैं तो खुद ढांचा बदलूँगा।
पल पल के घुटने से बेहतर
मैं एक पल की मौत मरूँगा।।

आयें कहां से ?

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

नीरवता में
नुपुर किंकिण
आये कहां से ?
कोलाहल मय महानगर को,
सरगम की मधुमय गागर को,
तारमन्द्र ध्वनि के सागर को,
छोड़ विजन में,
ध्वनि निमंत्रण
आये कहां से ?
नीरवता में,
नुपुर किंकिण
आये कहां से ?
शीतलता तज चन्द्र किरण की,
इन्द्रधनुष से भरे गगन की,
संत रंग मन मोह भवन की,
चमक भुला कर
किरण निमंत्रण
आये कहां से ?
नीरवता में
नुपुर किंकिंण

आये कहां से ?

छोड़ समय की तीव्र गति को,
वायु वेग से मन की मति को,
जन्म मरण से परे यति को,

तद्रुपा में
क्षणिक निमंत्रण
आये कहां से ?
नीरवता में
नुपुर किंकिंण
आयें कहां से ?

तथ्यों की पत्थर जड़ता में,
नितकामी की निस्पृहता में,
योगी की निवचल द्रढ़ता में,

भावशून्य में,
मधु सम्बोधन
आये कहां से ?
नीरवता में
नुपुर किंकिण
आये कहां से ?

अवरूद्ध हो गये

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

अभिव्यक्ति के सारे पथ अवरूद्ध हो गये
इतनी जड़ता है सब वाक्य निरूद्ध हो गये
घर में महफिल में गलियों में बाजारों में
इतना सन्नाटा क्या सभी प्रबुद्ध हो गये ?
कुछ ही है जो जगह जगह पर पथराते हैं
कुछ तो कारण है जो कुछ ये कुद्ध हो गये ?
में अजस्य देहों का झरना नही थमेगा
गरदन और चाकू में अनगित युद्ध हो गये।।
दान धरम के कारण तो धन सभी लुट गया
सब विकार हो गये साफ हम शुद्ध हो गये।।

दिनकर की वर्जना

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

सूरज के उगने पर
चादर ढ़क लेते हैं
परत दर परत चिपकाने
लगते हैं छिलके।
जिससे किसी कोण पर
छेद नहीं रह जाये
अंदर का नंगापन
बाहर को न छलके।।
ये घर नहीं मजारें है
कई मंजिल वाली।
जिनमें मुर्दे बदहवास है,
घूमा करते है।
यहां हवायें सामूहिक
हत्या करती है
परिजन शब्दो की
छुरियां भोंक करते है।।
निशा रंगो में जो,
मधु संचारित करती है
दिन में एक निशाचर
बन तुम पी जाते हो।
दिन कर दिन मत दिया
करो प्यारी धरती को।
इस उपवन को
तुम शमशान बना जाते हो।।

बेईमान उपदेशक

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

शहर शहर खंडहर हो गये
घर घर में मायूसी पसरी
कैसी हवा चली दुनिया का
हर उपवन श्मशान हो गया।।

छोड़ गया था जिसे चमन में
उसकी याद बहुत आती है
क्रूर वक्त के हाथो पिटकर
जो गुंजा वीरान हो गया।।

भटका बहुत कहे ओरों के
अब तो दिल के कहे चलँूगा
क्योंकि हैं उपदेश निरर्थक
उपदेशक बेईमान हो गया।।

लोग

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

उदास पर्व पर लगते है लोग
हमें तो माध्यम लगते हैं लोग

इनका अपना नहीं है कहनें को
हमें जो उद्धरण लगते हैं लोग

कर्ता नैपथ्य में छिपा होगा
सामने तो करण लगते हैं लोग

जो ये लिखते है तो कलम होंगे
सोचते तो नहीं लगते है लोग

चलना और बोलना तरीके से
किसी कठपुतली से लगते है लोग

क्रांति का आव्हान

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

सतहें,
दोनो सतहों में
जब सापेक्ष गति हो
तो घर्षण होता है।
उससे क्या
उस घर्षण से क्या
उस घर्षण से तब
मेरे भाई क्या होता है ?
बढ़ती गर्मी,
बड़े तापक्रम से
अंगारा पैदा अंगारे से
दावानल होता है
आग
आग से बर्फ
और लोहा तक का
पहाड़ एक द्रव होता है।
एक सतह
वह एक सतह
जड़ पड़ी व्यवस्था
अष्ट पदी पंजो वाली है।
और दूसरी
तू है यौवन
तूने भी क्या जड़
से संधि कर डाली है ?

आग लगा,
तू हुंकारे भर
तूने सदा समय
के रथ में गति डाली है।
शोषण और
अन्याय मिटा
तू बड़वानल बन
फिर देख क्रांति आने वाली है।।

जल की अविरल धारा

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

सजग नहीं है बनना
जल की अविरल धारा
कई विरोधी धारायें बहती है अंदर
तिर्यक धाराओं का उलझा एक समंदर
अन्दर की असमान
टक्करे/ सहता रहता सुदृढ़ किनारा
सजग नहीं है बनना
जल की अविरल धारा
बहने का अपना विरोध है उलझे पन का,
पथ भी ऊबड़ खाबड़ भय है भूकम्पन का
मन्थर गति का उचित नहीं आरोप तुम्हारा
सहज नहीं हैं बने जल की अविरल धारा
ऊपर का पानी ऊपर ही बूंद की ही है
ऊपर उड़ जाता है सारा
सहज नहीं है बनना जल की अविरल धारा
पर्वत से सागर तक रेखा बूंद खींचती
जंगल खेतो और बनों को बूंद सींचती
एक बूंद में सागर तक भर जाती
सहज नहीं है बनना जल की अविरल धारा
एक बूंद से महानदी तक अविरल धारा
वारि, बादल, वर्क शिला की बूंद सहारा
जल का स्थिर चक बूंद पर आता सारा
सहज नहीं है बनना जल की अविरल धारा
एक बूंद धरती की एक
गगन का मोती।
मधुर मिलन से पैदा पतली धारा होती।
कहीं समाता कहीं भटकता जल बंजारा।।
सहज नहीं है बनना जल की अविरल धारा।
यत्न करो ऐसे कि ये धारा न सूखे।
वरना हम सब प्यासे होंगे, होंगे भूखे।
धरती वृक्षो और हमारा यहीं सहारा।

सहज नहीं है बनना जल की अविरल धारा।

चांदनी

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

परियों के से पर फैलाये
देवदार के तंग श्रगो पर,
हौले से उतराती तरती
बिखर गई है चांदनी।
कहीं उछलती कल कल करती
थम जाती निशब्द कहीं पर।
चक्कर खाकर नीचे गिरती,
झरने के संग चांदनी।।
लुढ़क फड़क कर ऊपर चढ़ती,
मन्थर चलती हिम खेतों में।
पदमासन कर शैल शिखर पर,
तप करती है चांदनी।।
नभ निरभ से धागे लेकर,
पंतो के आंचल से रिसती,
नीचे विधे श्याम चद्दर पर
टंक जाती है चांदनी।
समतल भू की एक शिला पर
बैठ पसारे दृष्टि क्षितिज तक
अर्द्धरात्रि की नीरवता में
सोच रही कुछ चांदनी।।

खंूटा

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

हरियाली संग भरी कुलांचे

सरपट भागा मैदानों में
चढ़ी पहाड़ी हंसते हंसते
जीवन का खच्चर खंूटे पर
बंध हुआ उदास बैठा है।।

हरियाली आगे पीछे से
हरियाली ऊपर नीचे से
हजरत हरियाली में विचरे
थम थम कर या सरपट्टे से
गुजर गये मैदान थका कर
हजरत बंधे रहे खंूटे से।।

टेक टेक कर टेढ़ी लाठी
आई थकाती एक पहाड़ी।
कसक कसक कर धीरे धीरे।
चढ़े शिखर पर नीचे देखा।
बंधे हुये थे खूंटे पर ही।।

वय संधि पर

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

सूरज चंदा जिसके प्रहरी
तिड़क गई वह काल कोठरी
टूट गये वर्षो के बंधन
वय संधि पर

किरणों का झरना बहता है
झिल मिल झिल मिल तारे नचते
पवन झूती मद मय गज सी
वय संधि पर

देशकाल के रचने वाले
बंधन से उन्मुक्त किया तो
फिर से बंधन में न डालो

स्थिर कर दो समय हमारा
वय संधि पर

टंका बिन्दु

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

आधी आलोकिल
आधी अधियारी छाया,
एक पारदर्शी छाया सी
घटनायें जुड़ जाती है
और टाँक कर एक बिन्दु वे
छाया सी लग जाती है।
काले और सफेद बिन्दु की
एक पारदर्शी काया।
आधी आलोकित
आधी अंधियारी छाया।।
उनके संकोचन प्रसरण से
बहस ठोस का होता है।
पारे जैसा ही फिसलन सा
जीवन पल भर का होता है।
एक बिन्दु जो टंका कहीं पर
वहीं न मिट जाया।
आधी आलोकित
आधी अंधियारी छाया।।

पोखर

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

अंजुली भर उथला
तो आसमान गहरा
पर्वत सा शांत तो
चंचल ज्यो निझर/पोखर।
सीमा कि लांघ लो
तो यो असीम सूरज
क्या चंदा क्या तारे
ब्रम्हाण्ड पूर्ण अंदर। पोखर
बिन्दु ब्रम्हाण्ड में तो
एक विश्व अन्दर
बहुतो तो कुछ नहीं
तो कुछ को समन्दर/पोखर

किनारे

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

नदी से बड़े हैं
नदी के किनारे
    किनारे से गहरी
    नदी तो नहीं है
    किनारा नहीं तो
    किनारा नहीं है
किनारे लघु तो/नदी है लघुत्तम
ये धारा न होती/न होते किनारे
नदी से बड़े हैं/नदी के किनारे।।
    उफनती है/धारा तो यू टूटते हैं।
    नदी सूखती है तो ये सूखते है
    नदी सूखती है तो ये सूखती है
    नदी फैलती है निगलती किनारे
    किनारे सरक करके
    बनते किनारे
नदी से बड़े है
नदी के किनारे।
    किनारे करूण हों
    तो जल निधि बना दे।
    किनारे कृपण दो
    तो धारा सुखा दे।।
    नदी शक्ति रूपा
    किनारे नियामक।
    नदी आचमन तो
    कमण्डल किनारे।।
नदी से बड़े है
नदी के किनारे।।

लिखा गया कोलाहल

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

लिखा गया कोलाहल,
लिखने वाले थे सरगम।
लिखी राष्ट्र के नाम,

शब्द है उस पुस्तक के हम।

लिखते लिखते स्वर्ण भूमिका,
पृष्ट खर्च हो गये।
अब तो संशोधन है इतने,
मूल कहीं खो गये।

हरेक शब्द है क्लान्त,
स्वार्थ के नीचे हरेक कलम।
लिखा गया कोलाहल,
लिखने वाले थे सरगम।।

टनों स्याही शहर भेज दी,
गांव पड़े सूखे।
गांव शहर के नौकर हो गये,
रह रह के भूखे।

गांव गुलामी करते करते
खो बैठे दम खम।
लिखा गया कोलाहल,
लिखने वाले थे सारगम।।

शहरो के संस्करण निकाले
गांव हांसिये हुये।
नकल छपी रंगीन पेज में
मूल रहे अनछुये।।

कैसी पुस्तक लिखी
शब्द है बहुत अर्थ है कम।
लिखी राष्ट्र के नाम
शब्द है उस पुस्तक के हम।

हरेक तिजोरी के इसमें
अधिकार सुरक्षित हैं।
हरेक स्वर्ण अक्षर के
इसमें अनुक्रम अंकित है।

धनिको को यह वेद समर्पित
पड़ा हुआ बेदम।
लिखी राष्ट्र के नाम
शब्द है उस पुस्तक के हम।

इस की तारीखो में अंकित
नृप के अत्याचार।
मथुरा पड़ी कंस के नीचे
रो रो करे पुकार।

भीष्म पितामह बिके हुये,
चुप बैठे है आश्रम।
लिखी राष्ट्र के नाम
शब्द है उस पुस्तक के हम।

खाकर पन्ने जिल्द
सुनहरी चमकीली हो गई।
पक्षी उड़े विदेश
रोपणी सब पीली हो गई।।

नदियां महलों में जा बैठी
नहरो के माध्यम।।

लिखी राष्ट्र के नाम
शब्द है उस पुस्तक के हम।।

गांवों को दो काम
स्वच्छता नगर हवाओं को।
शहरो का कम करो बजट
दो ज्यादा गांवो को।

गांव न सुविधा हीन रहें,
न छुटे शहर का दम।।
लिखी राष्ट्र के नाम,
शब्द है उस पुस्तक के हम।

व्यास लिखो ऐसा भारत जो/सदियों सुरभित रहे।
जन संख्या, जल और जंगल का,
वितरण उचित रहे।।
देर हो चुकी बहुत, उठाओ अब तो सही दम

हिन्दुस्तान

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

चना नहीं है घर में खाने
बापू है बीमार
बीबी रोती अनुशासन को
ये कैसा घर बार
नहीं जरूरत फिर भी
घर में चेता दिया अलाव
हवा दे रहे घर के दुश्मन
पैदा हुये दुराव।।
घर में बजते खाली बरतन
नदीं नहीं है पास
गर्मी के दिन कैसे कटे
बुझती नहीं प्यास।।
गोली जैसे शब्द छूटते
हर घर बदनाम
कोई गरदन न उतार दे
रक्षा करना राम
करते हस्तक्षेप पड़ोसी
घर में हैं शम्शीर

बटवारा फिर से न होवे
रक्षा करना पीर
टूट रहा है अंग अंग
और आफत में है जान
जुड़ी ताप चढ़ा क्या
तबीयत हो गई हिन्दुस्तान

हम और जमाना

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

खड़ा देख हमको पैरों पर
दहशत में आ गया जमाना
अब चलने और दौड़ लगाने
मैं है कितनी देर जमाना
खर्च हुआ लालन पालन में
उसे नियोजित कहे जमाना
दाता दाना चुक जायेगा
पहले तो घर छोड़ जमाना
खड़ा हुआ जो बहकाने को
मयखाने मत खोल जमाना
कर विष की अब बंद पिटारी
तू खुद कर खुदखुशी जमाना
एक अकेले लडते लड़ते
हम बदलेंगे तुझे जमाना
एक अकेले हम अनेक है
तू है केवल एक जमाना

अंदर की गुफाओं और अस्तित्व

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

मेरे अंदर का वह हिंसक पशु
शेर नहीं है।
हालांकि मैं ढोल यहीं पीटता रहा हूँ।
पर वह भेड़िया है।
और यही सही है।
क्योंकि जब शिकार गाफिल रहता है
तब वह भटकता है।
अन्यथा मांद में पड़ा रहता है।
मांदे
जो अंदर तक अंधेरी है
और अंदर ही अंदर
एक दूसरे से जुड़ी हैं।
अगर शिकार कमजोर होता है
तो वह दुन्द भी बजा कर
उसे चुनौती देता है।
फिर उसे घेर कर खदेड़ता है
क्योंकि
एक दम मारने में
हिंसक आनंद नहीं आता है
शिकार
मारने में एक भूख बुझती है,
और तड़पाने में दूसरी।
कई शाखाओं में बटी,
भूख है उसकी।
शिकार की
लाश घसीटता हुआ
गुरगुराता हुआ,
वह मांद में लाता है।
जो उसने बचपन में बनाई थी
बार बार पिटने पर
वह अंदर भागा है,

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

और एक मांद बनाई है।
इस तरह हर मांद, उसके
पिटने की निशानी है।
और वही उसका
राज्य है।
उन मांदो में वह,
शिकार को किश्तो
में चबाता है।
वह तबकि याद
करता है जब,
कोई मांद नहीं थी।
अब तो, जब उससे
कोई फुर्तीला और
ताकतवर पशु
झपटता है,
तब, वह उसका
शिकार नहीं बनता।
भाग कर एक
मांद में घुस जाता है।
जो अन्दर तक अंधेरी है।
उन मांदो में वह
राजा की तरह घूमता है
इस तरह बाहर
का पराजित
अन्दर अपराजित रहता है।
उन अंधेरी गुफाओं
में भटकता हुआ,
वह क्या देखता है
कि वे गुफायें ही उसे
परिचालित करती हैं।
और जहां भी वह
जाता है वे गुफायें
उसके साथ
चलती हैं।

रोशनी निकले

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

मेरी मां रेशमी परिधान
मुझे बुनती रही।
मौत पर उसकी मगर
कहते है कीड़े निकले।।
अब तो स्निग्ध कपोलों से भी

डर लगजा है।
मैनें अंडो को जो सेया तो
सपोले निकले।
दोपहर बाद वे ऊपर की छतों पर आये
पूछते है किं कितनी देर हुई दिन निकले ?
बन गया सूर्य हिमालय का अर्दली यारो
दीप धरती के तुम बनो तो रोशनी निकले।

मैं

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

कभी कभी क्या होता है
कि गति की लय से
असम्बन्ध होकर/मैं भटक जाता हँू
पिता के सुरक्षित गोद में।
या स्कूल में,
जहां मेरी पीठ थपथपाई गई थी।
या उन जंगलो में,
जहां मुझे शीतल विश्राम मिला था।
या उस तालाब में
जिसके ठंडे जल में
मैनें डुबकी लगाई थी।
फिर मेरे ही अन्दर
झटके से
दोपहर की तेज धूप फैलने लगती है।
और मैं खुद को

एम भीड़ में पाता हँू
और आंखे फाड फाड़ कर
आस पास चीन्हता हँू।
तो सब/ये ही सब
जो मुझे अपना अन्त्याज मानते हैं,
यथा दोस्त/पत्नि और बच्चे।
बतलाते है कि मुझे
फिर दौरा पड़ा था।
मैं यह पश्चात परिवेश
नियति मानकर
गति की लय से
संबंद्ध हो जाता हँू।

पिता

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

हे पिता,
मैनें झंझबातो में भी
तुम्हें मेरे ऊपर साया करते देखा है।
प्रतिपल तुम्हें केवल मेरी मुस्कुराहट
चाहिए थी।
वह भी मैनें कृपण होकर तुम्हें नहीं दी।
तुम्हारी छाया में मैं धूप से बचता रहा
और स्वाद के लिये फल खाता रहा।
तुम तेरी मांगों पर भी खुश हुये
और आलोचना पर भी।
तुम से दूर मैं बेफिक्र होकर
सोता रहा।
और तुम मेरी कुशलता के लिये
ईश्वर से प्रार्थना करते रहे।

अतृप्त इच्छायें

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

लटकती है अतृप्त इच्छाये
अधर में
डोलती है कण्डील की तरह
यहां से वहां
मगर खुद अंधी है
उन्हें कुछ नहीं दिखता
कभी अविशिष्ट होने
और कभी गंुठित होने
थरथराती है लक्ष्य पर पहुंच कर।
कांप कांप जाती है
घिसट कर जमीन पर कुछ दूर।
फिर गिर जाती है लाश की तरह
शिथिल होकर।

तारों को बिजली नहीं चाहिये

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

उतरो पखवाडे की दशमी को
थानेदार चांद
अर्दली शुक्र के साथ
आसमान के गांव साथ आया।
तो गरीब गुरवा तारे
घरो में छुपने लगे।
सारी रात वह उसका हक
वसूलता रहा।
फिर ऊषा के मधुर व्यापार का
झांसा देकर
सूरज पूर्व से घुसपैठ करने लगा।
दिन भर धरती को लूटता रहा।
और पश्चिम को चला गया।
राहत की सांस लेकर
तारे फिर आसमान के
गांव लौट आये।
और उन्होने दरखास्त दी है
कि उन्हें बिजली नहीं चाहिये।

एक तारा

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

सुहानी बिखरी सांझ को
        आराम से पसरे आंगन में
नन्हें नन्हें तारे फुदकते हैं।
        अष्टमी का चांद
अपनी पत्नि शुक के साथ
        सानन्द चमकता है।
उन नन्हें फुदकते तारो में से
        एक आगे निकल जाता है।
और भटक जाता है।

वह कभी का नन्हा तारा
बड़ा हो जाता है,
और दौड़ने लगता है।
फिर सारा वजूद
उसमें समा जाता है।
और बाकी सब
उसके पीछे भागने लगते हैं।

हम दोनों के बीच

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

हम दोनो के बीच
जो बदले परिचय की छाया
पहली बार तैरी थी
वह अब
इन तारो नदी आसमान
और इन सबके बीच
तैरने लगती है
जिनमें मैं जुड़ना चाहता हँू

एक ही साथ

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

एक निर्जन द्वीप पर
बैठे बैठे मैनें क्या देखा कि
मेरे अंदर का डर
एक लाठी में बदल गया।
लाठी बन्दूक में
बन्दूक बम में
और वह डर
तानाशाह बन गया।
एक निर्जन द्वीप पर
अकेले बैठे बैठे मैने देखा,
कि मेरे अंदर का प्रेम,
परिवार में बदल गया।
परिवार राष्ट्र में बदल गया
राष्ट्र संयुक्त राष्ट्र में।
और मैं अध्यक्ष बन गया।
निर्जन द्वीप पर
अकेले बैठे बैठे में
एक ही साथ
शैतान और खुदा बन गया

रस राज

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

रस राज श्रंृगार
हम गरीब, तुम्हें क्या जाने ?
रूबी सूखी खाते हैं
तो रस नहीं आता है।
और रही राज की बात
तो जो लक्ष्मी की नौकरी करता है
उसी का राज हो जाता है।

हन्टर और खालें

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

हन्टर,
तुम खाल जरूर खींचते हों,
समर्थन नहीं।
इस तरह तुम्हारे ऊपर,

बहुत सारी खालें चिपक गई है।
मगर मरी हुई खालें,
समर्थन नहीं
सडांध होती हैं।
तुम्हारे चारों तरफ
मरी हुई खालों के/खौफनाक प्रेत हैं।
जो तुम्हे,
आजीवन डराते रहेंगे।
और खालो के हन्टर,
और हन्टर की खालो को
आपस में
चिपकाते रहेंगे◌े◌ं।

अस्तित्व की समस्या

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

प्रियतम
तब कहां थी
कोई समस्या ?
जब हम एकीकार थे।
फिर क्या हुआ
कि बीच में एक दरार
पैदा हो गई।
वह दरार
बढ़ते बढ़ते एक दीवार बन गई
एक बड़ी समस्या पैदा हो गई।
पर जब हम स्वीकार थे
तब कहां थी कोई समस्या ?
मगर अब,
मेरे सर्वस्व

तुम मेरी हल
उस पार हो।
और यहां
मेरा अस्तित्व
एक समस्या है
मेरे लिये।

शाश्वत आनन्द

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

घंटियों की
मधुर ध्वनि
और नुपुर की रून झुन रून झुन।
तैरती है पंखुरी सी,
ध्वनि के आकाश में।
तुम्हारे आने का समाचार सुनकर
है प्रियतम !
पवित्र मंत्रो के उच्चार
और सुरभित वायु के उठते धुऐ
की तरह है हमारी मधुर वार्ता।
जो आनंद नाद की शिला पर
सुन्दर चित्र सी अंकित हो गई है।
मैं ऊर्ध्वगामी प्राण,
एक साधक हँू
और तुम एक स्थिर सूर्य से।
मेरे प्राणो का उद्गमन
एवं स्थिर शांत सूर्य से मिलन।
हे प्रियतम,
संभालना इस उत्क्रमण की बेला में।
फिर एक
अनिर्वचनीय
शाश्वत
आनन्द

खूनी बादल

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

समस्त विस्तार का
सिमटना,
सिमटकर
बिन्दु होना,
फिर उस बिन्दु के नष्ट होने का
आतंक
तुमने नहीं झेला।
आनन्द को,
आश्रय की आवश्यकता होती है।
वह
अंतरिक्ष में यंू ही नही लटकता।
अंतरिक्ष में
निराश्रय तो
खूनी बादल तैरते है।
जो
अंकुरो पर
अकारण गरजते है
फिर बिजली की कड़क के साथ
एक दम झपट कर
उस निश्छल
सबसे सुन्दर
पौधे को समूल
उच्छेदित कर
राख कर देते हैं।

बदबूदार, सीलन भरा कमरा

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

इस बदबूदार सीलन भरे कमरे की
सर्वोच्च सत्ता
छिपकली है।
यँ◌ू तो
इस कमरे में
जरा से दबाव से
चटख कर मर जाने वाले
तिलचटे भी हैं।
जब वे शरीर के ऊपर
रेंगते है तो अजीब सी लिज लिजाहट
देते है।
उनके पिच जाने पर
उनके दूसरे सिरे से
छिन पैदा करने वाला
गुदा निकल जाता है।
बहुत सारे
झींगुर है।
जो अकारण
एक स्थान से दूसरे स्थान पर
उचकते रहते है
मच्छर,
इस कमरे में भिनभिनाते ही रहते है।
उनके द्वारा खून चूसे जाने ◌े◌ा
मलाल नहीं है।
पर वे खुजली और जलन बहुत देते है
जिनसे नींद नहीं आती।
जो कि छत पर रेंगती छिपकली के
नीचे, सोने वाले यात्री को
बहुत आवश्यक है
भिनकने वाली मक्खियां है।
जो,
शरीर को खाना समझती हैं, और
खाने को शरीर।
एक शर्त सी लगी रहती है कि
कौन
उसे पहले जूठा करे।
न वे खाने ही देती है,
और न सोने ही देती है।
बस भिनकती रहती है।
मकड़ी के जाले,

हालांकि यहां जगह जगह है
पर उनके इतनी अधिक संख्या में
होने पर भी
इतने सारे कीड़े कैसे बचे रहते है ?
वह बदबूदार कीड़ा,
जब बालों मे घुस जाता है
या असावधानी वश कौर के साथ
मंुह में चला जाता है,
तो कैसा कैसा खराब सा लगने लगता है।
लगता है कि,
तुम्हीं को जिन्दा रहने का हक है
ए कीडे !
उन कीड़ो की लाशो को,
खोजती हुई चीटियां और चीटे हैं।
जो कमरे के फर्श को फोड़ कर
फैल जाते है
लाशो के लिये।
लाशो के टुकड़े की उनका
भोजन है।
इस कमरे में,
दिया जलाना भी अपराध है।
जब भी दिया जलता है
तो असंख्य कीड़े
जाने कहां से आकर
इसकी लौ ढक लेते है।
रोशनी उन्हें प्रकाशित करती है।
जो उन्हें पसन्द नहीं है।
अतः,
उसे बुझाने
वे खुद की जाने देने तक पर
आमदा हो जाते है।
एक नन्ही सी,
सुन्दर तितली
इस कमरे में आ गई है।
वह दीवाल दीवाल नाचती है।
इन तमाम कटीली झाड़ियो को
फूलो के बगीचो में बदलने के लिये।
वह जरूर उस
सर्वोच्च सत्ता छिपकली के
जबड़े में आ जावेगी।
छिपकली,
दीवारो के सहारे
ऊपर ही ऊपर रहती है
वह कीड़ा नहीं है।

तू और मैं

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

तेरे चरणों के नीचे मैं
एक दिया माटी का हूँ।
दुनिया ने दी दस पहचाने
मैं क्या जानू मैं क्या हूँ ?
तेरे चरणों के नीचे मैं
एक दिया माटी का हूँ।।
तूने मुझको रूप दिया है
तूही मुझको देखा कर।
मेरी दृष्टि तुम्हारी आभा ,
मत तू खुद को ओझल कर।
तू है तो मैं हूँ मंदिर में
तू ना हो तो मैं ना हूँ।
तेरे चरणों के नीचे में
एक दिया माटी का हूँ।।
तुझे देखने तिलतिल जलता
बुझने तक तू दिखता जा
जला जला करे मुझे बुझा दे,
एसी करूणा करता जा।।

निष्कासित दृष्टि से न कर
तू रब मैं नीरवता हँू।
तेरे चरणों के नीचे मैं
एक दिया माटी का हँू।।

तुम न होते

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

तुम न होते
तो मर गये होते।।
सभी सपने
बिखर गये होते।।
चमन कब का
उजड़ गया होता
टूट कर चांद
गिर गया होता।।
सूर्य प्रातः ही
ढल गया होता।।
जगत में एक मैं
नहीं होता।
अंधेरे दिन में
घिर गये होते
तुम न होते तो
मर गये होते।।
सभी सपने
बिखर गये होते।।

इच्छा ....।

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

तुम
मुझे स्वीकारती।
परिवर्दित करती।
और मैं हो जाती !
तुमने मुझे नकार दिया।
पर मैं तुम्हे धारण किये रहता हँू।
मेरा दर्शन,
देह से देह की अप्राप्ति की दशा में।
प्रसूत होता है।
देह इच्छा का माध्यम है।
और इच्छा
मुफ्त में पूरी नहीं होती।
मेरा दर्शन
नीरसता में रस घोलता है।
और स्वयं में बिखर कर
रोमांचित होता है।।

प्रश्नोत्तर

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

महा शून्य में प्रश्न उठा।

प्रश्नों के उत्तर उठ बैठे,
प्रति उत्तर फिर प्रश्न उठा।।

उत्तर मैं है प्रश्न कई।
शंका से गर्भित उत्तर,
प्रश्न कई और उत्तर कई।।

प्रश्न अलग उत्तर से है।
उत्तर असम्बद्ध पर है।
मतलब प्रश्नोत्तर से है।।

प्रश्न शांत तो उत्तर ध्वनि,
प्रश्न मुखर तो उत्तर चुप।
दोनो चुप और दोनो ध्वनि।।

प्रश्न गरीबी, उत्तर धन।
एक प्यास एक संतुष्टि।
प्रश्न भूख उत्तर भोजन।।

प्रश्न सुबह उत्तर संध्या,
प्रातः की पाती सूरज,
उस पर पता लिखा संध्या।।

शून्य प्रश्न उत्तर संख्या।
संख्या प्रश्न शून्य उत्तर।
ब्रम्ह शून्य माया संख्या।।

प्रश्न प्रलय उत्तर सृष्टि।
प्रश्न स्वयं तू उत्तर तू।
तू समष्टि तू ही व्यष्टि।।

एक प्रश्न मैं, मैं उत्तर।
दोनो हैं मेरे अंदर।
मैं हँू दोनो के अंदर।।

पुरूष प्रश्न उत्तर माया।
माया में से पुरूष प्रकट,
पुरूष निषेचित है माया।।

मैं अणु वह अनुशासन है
प्रश्न गरीबी की रोटी,
उत्तर मौन प्रशासन है।

प्रश्न चिरन्तन उत्तर क्षण,
प्रश्न तुम्हारी चितवन है।
उत्तर मेरा आकर्षण।।

प्रश्न कहीं पैदा होता।
उत्तर वहां नहीं मिलता।
उत्तर कहीं और होता।।

निशा

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

दिन में रात घुली।
जन्मी गोधुली।।

संध्या सूर्य मिले।
दोनो शर्मीले।।

सूरज ने जो छुआ।
क्षितिज गुलाबी हुआ।।
जब तुम घिर आये।
तारे घर आये।।
निशा एक उपवन।
तारे खिले सुमन।।
गगन जलाशय विमल।
तारे खिले कमल।।
गगन नगर है लिये।
जलते बुझते दिये।।
चन्दा दे भाषण
तारे श्रोतागण
चन्दा शिद्यार्थी।
तारे विद्यार्थी।।
दिन चेहरे दमके,
निविड़ धनी अलके।।
शांत दिशा, विदिशा।
समाधिस्ध है दिशा।।
जल पर धरती पर
धवल बिछी चादर।।
जाती है सजनी,
बायवीय रजनी।।
आहट रवि की हुई,
ऊषा लाल हुई।।
लो गमकी बेला।
आई ब्रहन बेला।।
लगा चीखने सुआ,
दिनकर पैदा हुआ।।
सबने वन में सुना,
उषा ने रवि जना।।
प्रसव रात को हुआ,
पूरब घुसर हुआ।।
दिन का फैला कर,
ऊषा ने दिनकर।।

मेरा साथी

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

जब शिथिल होता हँू
मैं दिग्भ्रमित होकर।
चिपकता डर है,
अचल पाषण बन कर।।
क्रीयाये किलोलें
भूल जाती।

और कुंठाये मुझे
ठोकर लगाती।।
उजाला बनता है जब
भीमूक दर्शक।
तब तिमिर बनता है
मेरा पथ प्रदर्शक।।
मेरी थामे बांह
देता है सहारा।
पथ अंधेरा और
पथ दर्शक अंधेरा।।

अमिताभ चक्र

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

उस चक्र का
भेदन कैसे करें
जहां आकर चेतना
बार बार रूक जाती है
हर बार चेतना
उध्र्वगामी होती है
और अमिताभ चक्रपर पहुँच
कर रूक जाती है
चक्र बहुत गतिशील है
भेदन में भय लगता है
वहां तक पहुँच कर
चेतना तिकोनी चेतना
वापिस आ जाती है

शाश्वत उद्गम

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

अंधकार में मैं
प्रकाश से अंजाना
दीप जले तब मैनें
खुद को पहचाना
रंग बिरंगी किरणो के
हे शाश्वत उद्गम
जलते रहना दीप
नयन तज मत जाना

चिड़िया चहकी

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

चिड़िया चहकी।
भोर हुये चिड़िया चहकी।।
जैसे कोई कली चटकी।
बगिया महकी।।

जैसे सांझ ढले चमका पहला तारा।
या तालाब में पहना पहला खिला कमल।
सुबह सुबह ज्यो गाता जाये बंजारा।
यौवन देहली पर प्रथम दृष्टि बहकी।।
जैसे कोई कली चटकी बगिया महकी।
चिड़िया चहकी।।

जैसे रात्रि को प्रथम ब्रहम आभास हुआ।
गहन तिमिर में मंदिर का जलता दीपक।
ऊहा पोह में निर्णय ज्यो अवतरित हुआ।
जैसे किसी खेत में हो चंचल लड़की।
जैसे कोई कली चटकी बगिया महकी।
चिड़िया चहकी।

जैसे कोरे कागज पर एक फूल बना।
जैसे किसी शिशु ने पहला कदम रखा।
जंगल में जैसे बहता कल कल झरना।
घने बादलों में जैसे बिजली चमकी।
जैसे कोई कली चटकी बगिया महकी।
चिड़िया चहकी।।

सांझ हुये मस्जिद में कोई अजान हुई
या मंदिर में जैसे घन्टे निनाद हुआ।
गुरू ग्रंथ साहब की ज्यो अरदास हुई
भोर हुये पूरब में ज्यों ऊषा झलकी।।
जैसे कोई कली चटकी बगिया महकी।
चिड़िया चहकी।।

काश

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

काश बिखर पाता कण कण में।
वायु शीतल मंद सुगंधित बन कर बहता।
घने वनों में मस्त मस्त सरगम बन रहता।
कभी उड़ाता वस्त्र छेड़खानी में करता।
आंधी बन कर स्वयं ठिठक कर खुद ही बहता।
क्षण में रौद्र और शांत हो जाता क्षण में।
काश बिखर पाता कण कण में।।
बंूदे बन कर टप टप करता गाने गाता।
बनता कभी जलाशय कभी नदी बन जाता।
पोखर बनता कभी कभी वन रहता सागर।
हिम बनता में कभी कभी निर्झर बन जाता।
सोना बन कर गिरता मिल जाता कण कण में।
काश बिखर पाता कण कण में।।
नीलकण्ठ तोता बन उड़ता नील गगन में।
चिड़िया बन कोयल बन गाता में बन बन में।
चील गिद्ध बन कर मैं साफ धरा को रखता
आम बिही महुआ को फुदक फुदक में चखता।
काश प्रकृति के पन्ने पर बनता टंकण मैं।
काश बिखर पाता कण कण में
अगर शेर होता तो फिरता निर्भय वन में।
होती होड़ कुलाचों की मृग और पवन में।
होता भालू नील गाय संुदर जंगल में।
करते हम आनंद सदा रहते मंगल में।
प्रतिस्पर्धा करते पशु वन की सुखद शरण में।
काश बिखर पाता कण कण में।।

मछली घर

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

काश ये मछली घर बड़ा होता।
यानि इसका विस्तार

अनन्त तक होता।
तो मछलियां इसकी दीवारो से न टकराती।
तैरती रहती बिना अवरोध के।
यहां से वहां तक
जब तक वे चाहती।
इसमें मछलियां का खाना।
मिलता रहता उन्हें हमेशा।
जब जब वे चाहती।
न कि ऊपर से टपकता।
मात्र सुबह शाम।
उसमें आइने न लगे होते।
जिनमें मछलियां को प्रतिरूप न दिखता।
और वे धोखे में न रहती।
विमुरग्ध होकर।
स्वयं के रूप पर।
या।
टकरा कर लहुलहुान न होती।
उन आइनों में।

ऊषा

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

आई ऊषा कि खग चहचहाने लगे।
रंग रक्तिम दिखा गीत गाने लगे।।
रवि के आने पे कलियां चटखने लगी।
पक्षी उड़ने सभी कसमसाने लगीं।
पुष्प मार्तण्ड को अर्ध्य देने लगे।
तारे शरमा के खुद को छिपाने लगे।।
अरगले खुलने घर की सरकने लगी।
तीव्र पदचाप के स्वर सुनाने लगे।।
वन में चुप्पी जमी थी पिघलने लगी।
करते स्वर पशु जलाशय पे जाने लगे।
पहले घुसर फिर रंक्तिम सा पूरब हुआ।
झोंके ठंडी हवाओं के आने लगे।

सूर्य चढ़ने गगन की लगा सीढियां।
खण्ड हिम के नदी बन के जाने लगे।।
दीप स्वागत में सूरज की बुझने लगे।
क्षितिज अंगडाईयों के फिर छाने लगे।

विपर्यय

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

सड़क पर तेज चलते वाहन,
सड़क पर चलने वालो को
कुत्ते की मौत मार देते हैं।
चाहे फिर वह मानव ही क्यों न हो ?
कुत्ते तो खैर कुत्तो की मौत मारे जाते है
आदमी भी कुत्ते की मौत मारे जाते हैं।
वाहन,
उनके अंदर बैठने वाले कुत्तो को
तो महापुरूष समझते है, पर
सड़क पर पैदल चलने वाले आदमियों को
सड़क का कुत्ता समझते है।
इस कारण,
वाहन के अंदर बैठने वाला
कुत्ता भी
सड़क के आदमियों को कुत्ता समझता है।
मंहगी कारो के कारण
सब कुछ उलट पुलट जाता है।
कुत्ता आदमी को कुत्ता समझता है।
और आदमी समझता है
मंहगे कुत्ते को आदमी।

उनकी जान घाव में है

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

देख फिसलती एक मछली को
बगुला बहुत ताव में है।
बच्चे की किलकारी से, एक
न्यायालय तनाव में है।।
घावों से वे रहे झुकाती
ताकतवर रिपु को अपनी
अच्छा होना उन्हें नहीं है
उनकी जान घाव में है।।
लाई जिनको नाव किनारे, उतरे
छेद किया छोड़ा।
नाव बचाये ऐसा कोई
अब तो नहीं नाव में है।।
चीजें तो उड़ गई फलक पर
हम है ढगे हुये नीचे।
पंख लगे उनके भावो को
लंगर नहीं भाव में है।।
लकड़ी से ज्यादा कीमत है
फर्श वृक्षों की जो हरे भरे
उनके पत्ते हमें हवा दें
नीचे धरा छांव में है।।
आपस में लड मर जायेंगे
भेद डाल दो दुश्मन में
अजमा कर ये नुस्खा देखो
ताकत इसी दाव में है

दौड़ का नशा

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

वह दौड़ रहा था।
फूली हुई सफेद सुन्दर चपाती ने
उसे हाथ पकड कर रोका,
और कहा
“मैं मीठी और नरम हँू,
मेरा स्वाद लेकर चबा कर खाना।”
पर वह नहीं रूका
चपाती को दौडते दौडते खाया
और चल दिया दौडने
उसकी सुघड सुन्दर स-सौष्ठव
पत्नी ने मुस्कुरा कर पूछा
“मेरे पास बैठो और बताओ
मैं हीरो के नये गहनो और
सोने की जरी वाली नई साडी में
कैसी लगती हँू ?
उसने मुस्कुराती हुई पत्नी के
गालो के छूकर कहा “सुन्दर”।
और फिर निकल पडा दौडने
वह उन लोगो पर हंसता था
जिनकी केवल एक ही मंजिल थी।
जो धीरे धीरे आराम से चलते थे,
मंजिल की तरफ।
जो डाकखाने में चिट्ठियों को डालते थे।
हालांकि वे चिट्ठियां कभी भी
नहीं पहँुचती थी पाने वाले के पास।
ई मेल और फेक्स
का उपयोग नहीं जानते थे।
एयरोप्लेन से नहीं जाते थे।
एक मंजिल से दूसरी
मंजिल तक।
जिनके पास तीन आयास वाले
सत्तर इंच से बड़े
टी व्ही नहीं थे होम थियेटर के
जो निचली मंजिल पर ही रहते थे
धूल खाते हुये
लिफ्ट से ऊपरी मंजिल पर नहीं जाते थे।
वह ध्यान का तीन मिनिट
वाला पेकेज इस्तेमाल करता था
इलेक्ट्रानिक काबाओ का सिखाया हुआ।
जब वह पूजा करने बैठता

तो दौड़ता ही रहता था
मंदिर से मंदिर तक
वह दौड़ता ही रहता था
शायद चपातियां इकट्ठी करने ?
पत्नि के लिये था
मंदिरो में दान देने या
और नई नई फेक्टरियां खड़ी करने।
बहरहाल
वह दौड़ते दौड़ते
स्वर्गवासी हो गया उसके,
टुकड़ो पद पलने वालो के शब्दो में।
उसे शांत लोग
धीरे धीरे चलते हुये कब्रिस्तान
ले जाने लगे, तो उसे
गुस्सा आने लगा कि कैसे आलसी लोग है ?
जो उस जैसे कर्मठ व्यक्ति को,
धीमे धीमे श्मशान तक ले जा रहे है।
क्योंकि कब्रिस्तान में भी उसे दौड़ना है
एक कब्र से दूसरी कब्र तक।

मेरा घर, उसका कब्जा

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

मुझे वह अच्छी नस्ल का कुत्ता
भेंट में दिया गया था।
उसकी बहुत तरीफें की गई थी
मुझे सोंपने के पहले।
कुछ महिने वह मेरे घर लौटने पर
मुस्कुराता और पूछ हिलाता था।
आज दस साल बाद मुझे
अहसास हुआ कि वह मेरी
कमजोरियों का अध्ययन कर रहा था।

फिर मेरे घर लौटने पर
वह मुझे देख कर गुर्राने लगा।
उसे भगाने पर भी
वह घर से बाहर नहीं भागता था।
मेरे मेहमानों के सामने
वह पूँछ हिलाता और कूंकू करता
मानों मेरी शिकायत करता
कि मैं उस पर हिंसा करता हँू।
मैं यदि कुछ भी बोलता
तो वह और जोर से गुर्राने लगता।
विशेष कर जबकि
पशु हिंसा निरोधक दस्ता
घर के छिद्रो के अंदर झांकते थे।
उसे अहसास हो गया था कि
मैं उसे घर से बाहर नहीं निकाल सकता हँू
और अधिक दिन मैं भी घर के
बाहर नहीं रह सकता हँू।
क्योंकि मेरा घर मेरी कमजोरी बन चुका था।
जिस पर उस कुत्ते ने कब्जा कर रखा था।
वह शरीर पर तो हमला नहीें करता था पर
जेहन को लहूलुहान कर देता था
हर वार मेरे जेहन को नोचने पर
वह तरो ताजा दिखाई देता था
और तैय्यार करने लगता था खुद को
फिर मेरा जेहन नोचने के लिये।
उसने मेरे जेहन को ही
उसका घर बना लिया था

पाषाणों ने निगला बसन्त

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

पाषाणों ने निगला बसन्त/निगला सिंहो और त्रृक्षो को।
निगला जंगल के वृक्षो को/ निगला भौंरो और फूलो को
निगला नदियों के कूलो को/पत्थर ने निगले दिग्दिगन्त/पाषाणें ने निगला बसंत
गांवो को पत्थर निगल गये/पक्षी न जाने किधर गये ?
पत्थर अब नहीं रहे काबू/ होते जाते है बेकाबू।
लालच होता जाता अनन्त/पाषाणों ने निगला बसन्त।।
ये अनावृष्टि का कारण है/ये हिम सृष्टि का कारण है।
ओजोन परत में छेद हुये/धरती में अगनित छेद हुये।
ये दोहन अब रोको तुरन्त पाषाणों ने निगला बसन्त।।
धरती जलवायु प्रदूषित है और अन्तरिक्ष भी दूषित है
हम प्रकृति पर हो वे रहम गये/उसने छेड़ा तो सहम गये
ना समझी का अब करने अंत पाषाणों ने निगला बसन्त।।
तब कृष्ण रूप कुसमाकर था। यह कहा स्वयं माधव ने या

वह सरस्वती बन लुप्त हुआ। पत्थर में कहीं विलुप्त हुआ
न रही प्रकृति अब कृपा वन्त/पाषाणों ने निगला बसन्त।।
नृप हीन प्रकृति उच्छृंखत है/ऋतु राज रहित वह चंचल है
हम मित्र प्रकृति के हो जायें/आसन्न नाश से बच जायें
नासमझी छोड़ो श्रीमान/पाषाणों ने निगला बसन्त।।

बंधु

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

परमाणु बदलना तो अविष्कार है बंधु
पर जिंदगी धरती पे चमत्कार है बंधु।।
कागच पे उकेरे चित्र तो चित्रकार है।
बदले जो पत्थरो को, शिल्पकार है बंधु।।
जो भावनाऐं ओष थी पाषाण हो गई।
चोटी पे पहुँचने का पुरस्कार है बंधु।।
धरती शरीर, बाहुबल, गेहँू है पसीना।
रोटी कृषक की देह का अवतार है बंधु
वस्तुऐं सब उड़ गई धरती पे हम खड़े।
राशन की प्रणाली का चमत्कार है बंधु।
डरिये कि भीड़ चुप है और आँसू बहा रही।
ये मौन अश्रु नहीं एक चीत्कार है बंधु।।
जीवन हे अंधकार में मृत्यु प्रकाश में
कितना सहे निशीथ वह लाचार है बंधु।।
हो रहा है ज्ञान का विस्फोट इस तरह।
नई खोज अगले क्षण यहां बेकार है बंधु।।

सन्नाटे पर

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

ज्वार जिस तरह भाटे पर।
लिखी चपाती आटे पर।।
रिश्ते नाते जैसे हों
एक तिजारत घाटे पर।।
इज्जत का चेहरा उतरा
एक जुवां के चांटे पर।।
हरसू घूस छेड़खानी
और शहर सन्नाटे पर।।
मुल्क भूख बेकारी में
मंत्री सैर सपाटे पर।।
मौत हसीना आगे है
मत इतरा फर्राटे पर।।
पिट कर क्या भाषण देना,
जूड़ो और कराटे पर।।
नाप तेरी हो जायेगी
जरा खड़ा हो कांटे पर।।

दिल का गीत

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

वह उजाले का नहीं जाया है।
रात से उजाले में आया है।।
न रात है न दिन है उसने तो
रंग एक दरम्यां का पाया है
भेंट देने को फकत खुशबू है
कांटा एक गुलाब लाया है।।
अटपटी बात के अंदर झांके,
दिल में दीवान एक समाया है।।
दूर वीणा में एक झंकार उठी
तार ने दिल का गीत गाया है।।

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

मेरे एक मित्र घर पर आये।
फिर देखा उन्होने दांये बांये।।
कुछ इधर उधर डोले।
फिर धीरे से बोले।
तुम्हारे नग्मों की पिटारी दिखाओ
होली पर कोई कविता हो तो बताओ।

मैं काइयां पन से बोला
और उन पर राज खोला
है मेरे दूर के मित्र
एक बिकट मुसीबत है सचित्र
मैं बीस सालो से एक ही कविता
सुना रहा हँू।
उसी को घसीट कर बीसवीं सदी से
इक्कीसवीं तक ला रहा हँू।
तुम्हें वही दान कर दंँूगा।
तो मैं क्या करूँगा ?
मैं जिसे ओढ़ता बिछाता हँू।
उसी कविता को हर बार सुनाता हँू।
है मित्र क्या मैं अक्सर वादी कवि लगता हँू ?
क्या हर दिन के लिये दो से अधिक कवितायें रखता हँू
मेरे पास दिन के दो के हिसाब से कवितायें नहीं है।
सुबह त्यौहार और शाम को जयन्ती की रचनाऐं नहीं है।
उसने खराब सा मंुह बनाया और कहा।
मैं किस फटेहाल के पास आ गया।
इसकी जेब भी खाली है।
और दिमाग भी खाली है।
इससे तो उसका सड़क का गंुडा मवाली है।
फिर बोला, अच्छा चलो उधार दे देना।
अगले महिने ब्यात समेत दो ले लेना।
मैं बोला अपनी एकमेव रचना तभी दे पाऊँगा।
जब तुमने उधारी का रेवेन्यू स्टाम्प लिखवाऊँगा।।
यदि तुमने वापिस न दी तो पुलिस में रिपोर्ट लिखवा सकूॅगा।
तुम्हे घसीट कर न्यायालय ने जा सकँूगा।
मैं एक रचना दँूगा और दो ब्याज सहित वापिस लँूगा
इस तरह बहुत सारी इकट्ठी हो जायेगी।।
जो मेरे आने वाले कविता संग्रह के काम आयेंगी
और कविताओं का बैंक बनायेंगी
कवितायें उधार दंूगा आसान किश्तो में
जो वापिस नहीं कर पाया तो उसे दिवालिया घोषित करवाऊंगा
उस कवि को अमानत में खयानत के लिये सजा दिलवाऊँगा
जिससे वह न तो कविता बनायेगा
और न ही कविता उधार दे पायेगा
वह चिड़ कर बोला मैं जानता हँू कि/तुम कविताओं के जमाखोर हो
कविताओं के रिश्वत खोर हो।
तुम कविताओ को टायलेट और तकियों में छिपाते हो।
उनका बीस प्रतिशत भी नहीं छपवाते हो।
क्या तुम्हे मालूम है कि कविताओं का भी आयकर विभाग है ?
जिसका हरेक कविता संग्रह पर बीस प्रतिशत भाग है।
मजा आयेगा जब तुम्हारी कविता संग्रह पर भी छापा पड़ेगा।
वह तुम्हारे गद्दो तकियो को उघेड़ेगा।
तुम्हारे टायलेट पर ताला लग जायेगा।
तुम वहाँ नहीं जा सकोगे और तुम्हारा पेट फूल जायेगा।
इस तरह वह मुझे डरा कर एक की जगह दो कवितायें ले गया

रहे हैं

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

धुरी से परिधि का सफर करते रहें है।
वृत की भी पूरी खबर रखते रहें है।।
हंसता है पर देखिये चेहरे को ध्यान से।
उसमें हरदम लोग कई लड़ते रहे है।।
आप तो नये है यहां है अपरिचित हमसे।
आप हमको गलत कैसे कहते रहे है।।
हम तो नीचे धरा पर है मुष्टिका जैसे।
आप नभ पर पहुँच कर भी डरते रहते है।।
सलवटे ये चेहरे पर चाबुक के चिन्ह है।
समय के सामन्त को हम सहते रहे हैं।।
चाल धीमी हमारी एक सावधानी थी।
विश्व में मंदी हुई हम बढ़ते रहे है।।
मध्य में हम है हमी से दोनो छोर है।
हम से दोनो शक्ति प्राप्त करते रहे है।।
बादलों के बीच में बिजली का रास्ता।
सुधाकण उस मार्ग से ही झरते रहे है।।
टोकनी फल की गगन, तारे सुस्वाद, फल
दिवाकर एक एक उठा कर चखते रहे हैं।।
चन्द्रमा वाहन का चालक यात्री उड़गण है।
निशा वाहन से उतरते चढ़ते रहे है।।

वृहन्नला

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

आम आदमी के लिये,
वृहन्नलाओं का समूह आश्चर्य एवं
भय से भर देता है।
करूणा से क्यों नही ?
या उनके लिये आदर का भाव जागृत क्यों नहीं करता ?
वे जिजीविशा का ज्वलन्त उदाहरण हैं।
प्रजनन क्षमता न होन पर भी
उनकी संख्या कैसे बढ़ती जाती है ?
उनके बारे में समाज में कई भ्रांतियां फैली हुई है।
कुछ का कहना है कि प्रसव करवाने वाली दाइयां
उभय लिंगी शिशुओ की सूचना उन्हें देती है।
तब वे उस शिशु को मांग कर ले जाते है।
फिर बड़ी ममता से वे उस शिशु की परवरिश करते है।
उन्हें अब दुख सदा सुख का पाठ पढ़ाया जाता है।
कुछ स्वयं ही वृहन्नला बन जाते है
मानव समाज में उससे अधिक सुरक्षित समाज कोई नहीं
क्योंकि वृहन्नलला बनना भूखे न मरने की गारंटी है।
बीमारी में उनके अपने चिकित्सक होते है।
देखभाल तो वे करते ही रहते है।
एक वृहन्नलला मानव जाति के दो दुश्मनों से तो बचा ही रहता है
वे है भूख और बीमारी
कुछ धोखेबाज लोग कितने गिरे हुये होते है।
कि वृहन्नला न होने पर भी वृहन्नला का वेश धारण कर
लोगो को लूटते रहते है।
कुछ लोग कहते है कि बच्चे चुराने वाले
वृहन्नलाओं को बच्चे बेच देते है।
पर मैं इस पर विश्वास नहीं करता।
मेरे मन में वृहन्नला न तो इतने गिरे हुये
होते है और न ही अपराधी।
सब वृहन्नलाओं की आवाज कमोवेश एक
सी होती है, और गाने की मुद्रा भी।
जब कभी वे मेरे घर के आगे के आंगन में गाते है कि
"सज रही गली मेरी अम्मा सुनहरे गोटे में"

तब मैं कांप जाता हँू।
कि वे विशेष प्रकार से हाथ हिला कर।
मेरी औकात से ज्यादा रूपये मांगेगें।
मैं अधिक से अधिक पचास रूपये दे पाता हँू।
पर वे हजारो रूपये मांगते है।
यदि मैं नहीं दे पाता तो वे विशेष प्रकार
से तालियां बजा कर,
जोर से चिल्ला कर,
मेरी इज्जत तार तार कर देते है।
तब मैं सोचता हँू कि
काश मैं अत्यन्त उच्च धनिक
या मंत्री होता
तो उन्हें हजारो रूपये दे सकता।
पर तब उनकी पहुँच से दूर हो जाता
सुना है सागर और कटनी में
चुनाव लड़ कर
वृहन्नला मेयर हो गये थे।
मगर उन्हें काम नहीं करने दिया गया।
राजनीति तुम्हारे लिये नहीं है वृहन्नलाओं
तुम्हें केवल मोहरा ही बनाया जाता है।
आगे कर दिया जाता है।
भीष्म पितामह का वध करने के लिये
महावीर शिखंडी की तरह।

कविताओं का बैंक

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

मैनें एक कविताओं का बैंक खोल रखा हे।
जिससे कोई भी, किसी भी अवसर के लिये
उत्कृष्ट कवितायें कार्य पर ले सकता है।

मगर मेरी कविता
किश्तो में या एक मुश्त में
एक ब्याज मय कविता के साथ
वापिस करना पड़ेगी।
मेरी कविता कोई हड़प न सके
इसका पुख्ता इंतजाम करता हँू।
कर्ज की लिखा पड़ी
“रेवेन्यू स्टाम्प” पर करता हँू।
दो गवाहो के साथ।
सारा विनिमय गोपनीय रखा जाता है।
केवल बैंक का विज्ञापन ही किया जाता है।
किसने क्या कर्ज लिया यह नहीं बतलाया
जाता, बशर्ते कविता, मय ब्याज के समय
पर वापिस कर दी जावे
अन्यथा मुकद्मा न्यायालय में पेश कर
दिया जाता है।
जो कविता ब्याज के रूप में बैंक को
वापिस दी जाती है
उस पर बैंक का “कापी राइट” हो जाता है।
बैंक अवसरवादी है।
यानि उसके पास हर अवसर,
त्यौहार, जयन्ती दिवस के ऊपर
पचास पचास कविताऐं है।
कई बार तो पूरी कवि
गोष्ठी ही बैंक से कर्ज में
ली गई कविताओं पर आधारित होती है।
इस बैंक से मुझे क्या लाभ है आप पूछेंगे ?
इससे लाभ यह है कि ब्याज की
कविताओं से मेरे करीब ढाई हजार काव्य
संग्रह प्रकाशित हो चुके है।
अब तो गिनिज बुक आफ वल्ड रिकार्ड
वाले भी मेरे बैंक का चक्कर लगाने लगे है

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

शोर का शासन यहाँ
और भीड़ का कानून हे।
शीर्षक आदर्श का
धोखाधड़ी मजमून है
आंधियां है रिश्वतो की
शीर्ष पर पैसा रखा
सच दिहाड़ी में लगा,
रोटि नहीं एक जून है।
गरीबो को मिल रही एक ईमानदारी प्यून है
शिकारी व्यापार है

विज्ञापनों के जाल है।
वजन में पेकिंग बहुत
पर माल उनमें न्यून है।।
तिजारत रिश्ते हुये

रूपान्तरण

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

जीवन का उद्भव,
रूपान्तरण है।
जैसे पहाड़ी बर्फ का
पिघलना
एक रूप से दूसरे रूप में ढलना, जन्म लेना
अव्यन्तन से व्यक्त होना जल में
फिर बच्चो की तरह
गतिमान होना
प्रफुल्लित होकर दौड़ना
तेजी से
छलछलाते हुये
मैदानो में हो जाना धैर्यवान।
धीरे धीरे शान से बहना
गहरे होकर युवावस्था की तरह
समेटते रहना वह सदा
जी साथ में चलता है।
मुहानो में बदलना प्रौढ़ की तरह
यथा नदीनां बहवो अम्क वेगा
समुद्रमेवाभि मुखा, दवन्ति,

बदलना समुद्र में
अपना अस्तित्व खोकर
धुल मिल जाना उन सब में
जो पहले पहाड़ी झरने थे
अलग अलग कभी।

तुम

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

तुम
गिरती हो एक कंकड की तरह
मेरे मन के तालाब में
और उठा देती हो
अनगिनत ताकतवर लहरें।
हर लहर
मुझे फोड़ कर
चल देती हे तुम तक।
फिर तुम से टकरा कर
बुझ जाती है।
क्योंकि हर लहर
कठोर किनारों से टकरा कर
नष्ट हो जाती है।
आश्चर्य है
कि कोई भी लहर
तुम को फोड़ नहीं पाती।
कि जगह बना पाती
तुम्हारे ह्रदय में।

कीड़ो का घर

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

घर
इतना बदबूदार हो गया है।
कि एक ही दिन में
कई अगरबत्ती जलाने पर भी,
हर बार हवाओं में
कुछ बदबू तैरती ही रह जाती है।
इस घर में
कीड़े हर जगह बिलबिलाते रहते हैं।
सब कीड़े मारने पर भी
कुछ बच जाते है/फिर बहुत सारे हो जाते हैं।
कुछ देर बाद ऐसा लगता है कि कीड़े
हमारे घर में नहीं हम कीड़ो के
घर में रहते हैं।
अपने हक के लिये हमें कीड़ो के आगे
गिडगिड़ाना पड़ता है
इस घर की सारी व्यवस्थायें
मानों कीड़ो के लिये बनी है।
हमारी नई पीढ़ी भी
शरीरिक भूख के लिये
कीड़ो की तरफ देखने लगी है।
क्योंकि हमारी नस्ल में
पारस्परिक शारीरिक संबंध
बनाने के लिये
कोई भी नहीं बचा है।
सब कीड़ो के दीर्घ सम्पर्क में रहकर
कीड़े बन गये है।

सचमुच का दुखी होना

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

मैं सचमुच का दुखी होना चाहता हँू
पर नहीं हो पाता।
आज कल
हंसना या रोना कोई हंसी खेल नहीं है।
भागते भागते रोना पड़ता है।
इस भागती जिन्दगी में
न तो ईमानदारी से हंस पाते है,
और न ही ईमानदारी से रो पाते है।
ईमानदारी से दुखी होने के लिये
वर्तमान से टूटकर
अतीत में जाना पड़ता है।
और याद करना पड़ते है
अतित्रास दायी क्षण
मगर अतित्रास दायी क्षणों में
व्यक्ति पत्थर बन जाता है।
और पत्थर
आंसू नहीं बहाते है
न जाने कितने अन्त्यजों को
कंधा देना पड़ता है जिंदगी में।
वर्तमान में
बहुत सारी खुशियाँ और
बहुत सारे गम जमीदोज हैं।
दुखी होने के लिये
उनको खोद का निकालना पड़ता है।
पर वे उतनी पूर्णता के साथ सतह पर
नहीं आते।
जितने कि वे, थे।
दुखी होने का एक अलग ही
आनन्द है
जितना कि दुख देकर पश्चाताप
करने में आता है।।

वर्षा का भेद भाव

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

वर्षा में थे जो घर वाले किये धार ने कई बेघर।
कभी गिरी है खूब झमा झम कभी गिरी है टिपर टिपर।।
बीज धरा में छिपा दिये कि ऊगेंगे पानी पाकर,
ना ही बरसे मेघ झमा झम ना ही बरसे टिपर टिपर।।
घर में फिर भी टपके रह गये घर को अच्छा छाने पर,
बाहर बरसा मेघ झमाझम अन्दर टपका टिपर टिपर।।
पहले तनखा निडर खर्च करते हैं और फिर डर डर कर।
सावन भादो खूब झमा झम और क्वांर में टिपर टिपर।।

दिन में दिल में सन्नाटा था रातें भारी हैं मुझ पर
सौतन नाचे खूब झमाझम विरहन राये टिपर टिपर
दुनियां तुम तो नीचे खूब झमा झम विरहन रोये टिपर टिपर
मेरे पिया छोड गये मुझको मेरे बालम तेरे घर,
तेरा आंगन खूब झमा झम मेरी देहरी टिपर टिपर।।
बाहर तुम लड़कर आते हो घर में मुझसे लड़ते हो,
मुझ को घुनते खूब धमाधम मेरे आंसू टिपर टिपर।।
लक्ष्मी मां है लेकिन उसके सबको अलग अलग तेवर,
कही बरसती खूब झमा झम कहीं टपकती टिपर टिपर।।

धधकती आग

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

कमरे के मध्य मेें
धधकती आग है।
जो स्पन्दन करती रहती है।
वह आग।
उबलते हुये पानी की तरह ।
खलबलाती रहती है।
वह आग।
चारो तरफ इन्सूलेटड फोम से घिरी है।
वह सुरक्षा कवच भी
स्पन्दन करता रहता है।
उस फोम का विस्तार।
मुझ तक है।
वह धधकती आग बड़ी हठीली है।
पर वह कुचालक मेरी इच्छा शक्ति से।
बड़ा या छोटा होता रहता है।
जब इच्छा शक्ति
कमजोर होती है।
तब आग का दायरा

तीव्रता के साथ मुझ तक पहुँच जाता है।
पर जब मैं उस आग से निस्पृह हो जाता
तब वह जलन स्वयं कम हो जाती है।
मानो उस कुचालक के ठण्डे छींटे
आग पर पड़ गये हो।
वह आग दब जाती है।
पर बुझती कभी नहीं।
सुलगती रहती है।
दुबारा धधकने के लिये।

निरन्तर

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

एक आग निरन्तर जलती रहती है,/बाहर/
एक पक्षी /बार बार उसमें कूदता है।
झुलस कर वापिस निकल आता है।
कुछ देर बाद /उसके
पंख निकल आते है।
आग उसे पुनः आकर्षित करती है।
ताजा होकर /वह उसमें फिर कूद जाता है
झुलसने के लिये।
वह बार बार उस आग में कूद कर
उसे बुझाना चाहता है।
मगर न तो वह आग बुझती है।
और न ही वह पक्षी उसमें।
कूदना छोड़ता है।
क्योंकि उस पक्षी के अंदर भी।
एक आग जलती रहती है।
निरन्तर।
बाहर की आग बुझाने के लिये।
निरन्तर।

पिंजरे की गठान

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

वह आदमी/
बार बार घूम कर वहीं आता है।
कुछ दूर सीधा चलकर/
घूमता रहता है उस पिंजरे में।
और समझता है/कि
हर कदम पर/उसने
एक नया आसमान खोज लिया है।
पर वह।
एक गठान ही होती है।
उसकी स्मृति की रस्सी में।
वह उस गठान से मुक्ति पाना चाहता है।
पर वह गठान और मोटी हो जाती है।
उसके पेट में।
और वह गठान उसके दिमाग का।
सारा रस खींचती जाती है।
और आदमी।
गठानों के सामने।
असहाय खड़ा रहता है।
डूबता उतराता रहता है।
एक ही भंवर में।
जो उसे किनारे तक।
नहीं जाने देती।
उस पिंजरे में
उसकी सांसे
होम होती जाती है, धीरे धीरे
बलात्।

सम्भ्रान्त

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

दिल में रख पाषाण नींव शांत है
भित्ति एक कंकर से भी उद्भ्रान्त है
बुझता दीपक पतिंग को जलाकर
सोचता है कि पतिंगा सांत है।
बढ़ता जाता है वजन जूतो का पर,
भूख मरती ही नहीं दुर्दान्त है।।
छिपकली रहती छतो पर, भित्ति पर
फर्श का कीड़ा बहुत आक्रांत है।।
मसीहा से दिख रहे शैतान सब
भूख से आदम बहुत ही क्लान्त है
सभ्यता है जिसके पैरो के तले,
आजकल तो बस यही सम्भ्रान्त है।।

सूद खोर मौसम

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

गगन फूल केशर है तारे।
कारे घन भौंरे कजरारे।।
बहुत हो चुकी जेठ दुपहरी।
बादल देख कहां है कारे।।
सूखे पौधे सूखी नदियाँ।
आ बादल कह कह के हारे।।
बरसेंगे तो यू बरसेंगे।
नदियाँ बन जायेंगे नारे।।

बरसेगा दिनरात झमाझम।
झल्ला के बोलेंगे जा रे।।
आयेगी बर्फीला ठंडी।
कपा कपा ठंडी से मारे।।
सूरज फकत शगुन को आये।
उसकी वाट जोहते सारे।।
खूब वसूले चैन हमारा।
मौसम सूदखोर है सारे।।

आया है

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

बहुत दिनो में दर्द पुराना आया है।
कहीं घूम फिर कर दीवाना आया है।।
एक घुमड़ते बादल में बिजली जैसी।
तूफानों के संग बेगाना आया है।।
कोई नहीं दिल में हलचल है शांत शमा।
टीस जगाने क्यों परवाना आया है।।
निश्चय कर लम्बी मेहमानी का दिल में।
नया कोई बनने अफसाना आया है।।
करने सबसे अलग सुनाने वह गम का।
अपना ही एक लिये तराना आया है।।
कोई हथोड़े सा धमकाता इस दिल में।
मुझे तोड़ने नया जमाना आया है।।

वहां न जायेंगे

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

मुद्तो बाद घर न जायेंगे।
हम ये हिम्मत जुटा न पायेंगे।।
पुरानी नींव तक नहीं होगी।
घर का हम पता क्या बतायेंगे।।
पुरानी याद रखे जेहन में।
नई गलियों में न समायेंगे।।
वहां नयी कलियां बस गई होगी।
तआरूफ उनको क्या करायेंगे।
पुराने घर के लिये इस घर की।
सरहदें पार कर न पायेंगे।।

हवायें

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

इस नाव पर अच्छा नियंत्रण रखना।
जरा सी ढील देने पर
हवायें इसे बहा ले जायेंगी,
उनकी मन मर्जी से
यहां वहां।
तब दुबारा नियंत्रण बनाना,
और मुश्किल होगा।
वे हमारी,
इस नाव को भटका देंगी।
या डुबो देगी।
उत्ताल तरंगो में,
इसे फिर तुम,
किनारे न पहुँचा पाओगे।
हमें मालूम है
तुम्हारा कुछ न होगा,
कसी दूसरी नाव को पकड़ लोगे।
पर मेरा विश्वास
नाव की तरह
टूट जायेगा।

मैं और वह तोता

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

परिस्थितियों के पिंजड़े में कैद मैं,
और वह तोता।

सुन्दर से पिंजड़े में कैद।
एक दूसरे को
सहानुभूति से
देखते रहते हैं।
मैं उसे राम राम कहना सिखाता हँू।
और वह मुझे टे, टें करना, मगर।
न ही मैं टें टें करता हँू।
और न ही वह राम राम कहता है।
मैं वर्तमान परिस्थितियों।
का वह पिंजड़ा तोड़ देता हँू।
तो एक छोटे पिंजड़े से
उड़ कर बड़े पिंजडे में कैद
हो जाता हँू।
इस तरह एक पिंजड़े
से दूसरे पिंजड़े में सफर
करते हुये।
मैं सोचता हँू कि /मैं
आजाद हँू /और
तोता /एक पिंजड़े में
बेचारा कैद पक्षी।
जिसके खाने पीने का
इंतजाम भी मैं ही करता हँू।
अपने खाने पीने के साथ।
फर्क ये है कि मुझे
पिंजड़ो में रह कर ही
अपनी अजिविका
जुटानी पड़ती है। उसकी
अजीविका के साथ।

कहाँ

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

इतना समय कहाँ ?
रखू ताल लय जहाँ।।
बिखरा सा जीवन।
तारतम्य है कहाँ।।
सत्यमेव जयते।
पर है सत्य कहाँ।।
पन्ने भर डाले।
उसमें कथ्य कहाँ ?
कड़वा सा जीवन।

उसमें नृत्य कहाँ ?
तमसों माँ तौ है।
है ज्योर्तिमय कहाँ
देश गर्व कर सके।
एसे कृत्य कहाँ ?

क्या वह धुंधलका है

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

प्रकाश कुछ छिपा नहीं सकता।
और अंधकार कुछ प्रकाशित नहीं कर सकता।
सब कुछ छिपा कर रखता है।
मगर इन दोनो का संधि स्थल
रहस्यमय लगता है।
बिल्कुल एक किशोर या किशोरी
जैसा वह विस्तृत क्षेत्र/जिस में प्रकाश
डूबता जाता है अंधकार में/या
अंधकार क्रमशः निर्वस्त होता
जाता है प्रकाश के समक्ष।
उसका क्या नाम सकता है ?
संध्या तो हो नहीं सकता।
संध्या तो दिन और रात का
संधि स्थल है।
छाया के लिये प्रकाश
और सतह के बीच में एक
अमेद्य पदार्थ होना चाहिये/पर
छाया भी वह क्षेत्र नहीं है।
जिसे प्रकाश एवं

अंधकार के मध्य का स्थान कहां जा सके।
मेघो की धरती पर परछाई
वह स्थान हो सकती है क्या ?
जलते दीपक और अंधकार के
गहन तिमिर के मध्य/वह
क्षेत्र हो सकता है जहाँ अंधकार
प्रकाश में चहलकदमी करता है
और प्रकाश अंधकार को अनावृत करने का प्रयत्न करता है।
ऐसा होता है वह विस्तृत क्षेत्र
जहाँ जागरण क्रमशः समाधि में
डूबता है और समाधि क्रमशः
जागरण में खुलती है।

जीवन

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

जीवन न तो मुंदी हुई कली है
निद्रा में लीन/और न ही झड़ता हुआ
फूल है, वरन्
वह तो एक पूर्ण खिला
हुआ फूल है/उत्फुल्लित
सब कुछ लुटाता हुआ।
अपनी सुगंध हवाओ में घोलता।
अपनी मधु तितलियों और मधुमक्खियों
को बांटता हुआ/या
अपनी सुन्दरता से सबको
प्रफुल्लित करता हुआ
बगैर किसी भेदभाव के।
और नाचता हुआ अकारण/
हवा के झोंको में।
उसके मदमय संगीत में।
उसकी खुशी के लिये।
तो अपना सब कुछ लुटा कर/जो
अकारण ही दूसरो की प्रसन्नता
में नाच सकता है।
वही जीवन है।

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

हर जगह लाइन लगी बस ये जवाब है
शासन नहीं चलेगा कम्प्यूटर खराब है ?
कुर्सी की कोशिश है टांगे टूटती
टांगो से कुर्सी करती हो आज भाव ताव
खुद का बदन खाता हुआ कैसा दिमाग
बदन है मजबूर जो किस्मत खराब है
स्विस बैंक के आगे झुके है देश भक्त
मुल्क परस्तों का सब ही उससे लगाव है
टेक्स से हो जायेगी खुश भुखमरी
वजीरे खजाना का ये कैसा जनता हिसाब है

किस किस को दँू

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

इसको दूँ या उसको दूँ
एक वोट किस किस को दूँ ?
फिर नारो से फिसल गया
मैं हूँ जनम जला भोंदू।।
बिजली, गुल पानी गायब
मैं तरजीह उन्हें क्यों दूँ ?
टेक्स खा गये सब मेरा
क्या खाने कुनबे को दूँ।।
प्रजातंत्र की महिमा है
मैं मरियल, मंत्री तो दूँ।।

बंद जिन्न

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

हैं वे नेता बहुत बड़े।
जनता उनकी जंग लड़े।।
है खजूर से आवश्वासन।
भुट्टों जैसे लोग खड़े।।
अब चुनाव में झुके हुये।
जो पहले थे अकड़े अकड़े।।
जिन्न बंद मतपेटी में।
जाने किसका निकल पड़े।।
भीड़ बड़ गई भक्तो की
वर्षा में दरिया उमड़े

हर नजर में

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

उनके तेवर खराब लगते है।
तमतमाये जनाब लगते है।।
ख्वाब में जब जनाब आते है।
मखमली से वे ख्वाब लगते है।।
उनकी बातें भी अच्छी लगती है
जवाब ला जवाब लगते है।
जुल्फ गिरती है सूर्ख चेहरे पर।
हुस्न में वे हिसाब लगते है।।
मेरे कहने पे चुप ही रहते है।
यही उनके जवाब लगते है।।
बदन है चलता फिरता मयखाना।
हर नजर में शराब लगते हैं।।

सर्वत्र

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

तुम्हारे हाथ की मेंहदी
निमंत्रण पत्र है मुझको।
प्रश्नासिक्त स्थित दृग
ऋचा के सत्र है मुझको।।
दृष्टि बस एक ही डाली,
कि पागल हो गया हूँ मैं।
हुआ अवधूत ये जग तू ही तू
सर्वत्र है मुझको।
तुम्हारे रूप की तुलना,
प्रकृति में छान मारी है।
तू जैसी मेरे अंदर है
नहीं अन्यत्र है मुझको।
कभी बादल फटे ऊपर,
कभी फिरता हूँ मरूस्थल में।
तुम्हारी याद इन सब में,
है एक छत्र सी मुझको।।
कहीं भी गिरू आकर्षण,
तुम्हारा उठा देता है।
कई ध्रुव मेरे अंदर है।
तू ध्रुव नक्षत्र है मुझको।।

भारत माता तुम्हे प्रणाम

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

नेता हो गये बिना लगाम।
भारत माता तुम्हें प्रमाण।।

बिखरे है झूठे भाषण।
करते है बस उद्घाटन।
खा जाते पूरा राशन।
नहीं छोड़ते है आसन।।

उनका हन्टर अपनी चाम ।
भारत माता तुम्हें प्रमाण।।

लोक सभा खाली खाली।
वहाँ उछलती है गाली।।
खबरे सब घपले वाली ।
घपलो पर बजती ताली।।

लोक सभा मंदिर बदनाम।
भारत माता तुम्हे प्रणाम।।

आश्रम है कि खुले हरम।
बाबाओं को नहीं शरम।।
खबरे आती गरम गरम।
कीचड़ में धस गया धरम।।

वहाँ छलकते जाम।
भारत माता तुम्हें प्रणाम।।

रोटी से उड़ गई प्याज।
राम राज में कैसा राज।।
मेहनत कश है भूखे आज।
पैसों से बंट गया समाज।। पैसो
से होते सब काम।
भारत माता तुम्हें प्रणाम।।

टी.व्ही. में सिमटी दुनिया।
शिक्षित करते खुदखुशियाँ।।
बेईमानी के घर खुशियाँ।
गर्भपात उगले मुनिया।।

शादी तै करता है दाम।
भारत माता तुम्हें प्रणाम।।

कभी कोयला खाते हैं।
कभी रेत खा जाते है।।
चारा कभी चबाते हैं।
देश बेच कर गाते हैं।।

भूखो मरती जनता आम।
भारत माता तुम्हें प्रणाम।।

छोटे देश दबाते हैं।
हम उनसे डर जाते हैं।।
वे नफरत फैलाते हैं।

आतंकी भिजवाते है।।

घर में भी नक्सली तमाम।
भारत माता तुम्हे प्रणाम।।

बाबू खाता है पैसा।
चक्कर लगवाता एसा।।
मर जाये ऐसा वैसा।
नही समय पहले जैसा।।

दफ्तर का है देश गुलाम।
भारत माता तुम्हे प्रणाम।।

चैराहे में देश फंसा।
राजनीति में धर्म धंसा।।
मंहगाई से गला कसा।
गुटके का हर जगह नशा।

राजनीति के मोहरे राम।
भारत माता तुम्हे प्रणाम।।

मुझमें

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

मैं स्थिर हँू मुझमें छिन पल चलते है।
अरमां मुझमें बनते और बिखरते है।।
बोलँू तो सब कहते है चुप रहने को।
चुप रहता हँू तो सब मुझसे डरते है।।
वर्षा में मन में भी बंूदे गिरती है।
उन्हें करूं गीला वे बंूदे छिटकते हैं।।
मैं मुझसें ही नहीं पकड़ में आता हँू।
गलत दिशा में मेरे कदम भटकते हैं
जरा जरा में भट्टी जैसा जलता हँू।
बुझता हंू फिर फिर अंगारे जलते हैं।।
जब मैं उनकी तरफ उठाता हँू उंगली।
कुछ कहने को उनके होंठ लरजते हैं।।
वे बड़वानल ऊपर में पानी जैसा।
अंदर वे लपटों को लिये दहकते हैं।।

सम्हल कर पिये

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

कोई इच्छा नहीं
            अच्छे कल के लिये।
हँू मैं बेचैन अच्छी
            गजल के लिये।।
थी पटी झील फूलो से
            सब ओर तक
भौंरा बेचैन था
            एक कमल के लिये।
दोनो चुप थे उदासी में
            रूखसत हुये।
थे वे बेचैन पहली
            पहल के लिये।।
वादा तुमने किया था
            तुम्ही हट गये
वादे होते है
            उन पर अमल के लिये।।
जाम पहले पिये
            मैनें छक कर पिये।
वाद के जाम सारे।
            सम्हल कर लिये

साथ साथ

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

वहां महल में जुल्मों का सामान मिला।
यहां सड़क पर जिन्दा एक इंसान मिला।।
आसमान से तो बरबादी हंसती थी।
विवश जमीं पर पड़ा हुआ अरमान मिला।।
बेईमान काजी कुर्सी पर बैठा था।
हाथ जोड़ता फरियादी ईमान मिला।।
जमींदोज बूढ़े पेड़ो को करना है।
एक सियासी रस्ते में फरमान मिला।।
एक गांव में साथ साथ ही रहते थे।
यहां फरिश्ता मिला वहां शैतान मिला।।

मैं और तुम

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

बहुत दूर आ गया यहां तक
तुम अब मत आना।

शांत झील हो गया ह्रदय
मत कंकड बन जाना।।

बहुत मथा तुमने मन को
लहरें ही लहरें दी।
भूल गया हँू उन यादो में
मैं आना जाना

स्थिर लौ हो गया दीप की
झांको मत झोंको।
भूल गया हँू मेरा तेरा
कड़वा अफसाना।।

मन चंचल हो गया
शांत फिर शीघ्र नहीं होगा।
खो जायेगा सब कुछ
हाथ रहेगा पछताना।।

बंद कली था जरा हवा भी
शरमा देती थी।
तुमको मन रख दिया खोल कर
अब क्या शरमाना।।

मेघ, बिजली और धरती

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

मेघ गरजते वहां गगन पर
बंूदे छम छम धरती पर।
बंूद बंूद बिजली रोती है
बादल गरजें बिजली पर

रात अंधेरी शव नम उसके
आंसू टप टप धरती पर।
बंूदे है समूह नर्तन रत
धरती एवं जल निधि पर।।

बादल पड़ते बैठ गगन पर,
वैदिक मंत्रो के स्वाहा
बंूदो की छवि छोड़ रहे हैं
वे धरती की वेदी पर।।

फुलकित रोम हुये धरती के
वर्षा में हरियाली से।
बादल हंसते बिजली जैसे
धरती की हरियाली पर।
चरवाहा जैसे ले जाता
हांक हांक कर पशुओ को।
हवा उड़ा ले जाती आगे
हुक्म चला कर बदली पर।।
बादल बंूदे ले कर आते
तपती धरती को देने।
मुट्ठी मुट्ठी बंूद गिराते
तब वे रूठी धरती पर।।

विपर्यय में

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

कोलाहल में नीरवता है।
नीरवता कोलाहल में।।
शीतलता में पावक है और
शीतलता बड़वानल में।।
राख बनी अंगारो की
और अंगारो को ढकती है।
ऐसे भी तिनके छूटे
जो बचे रहे दावानल में।।
अंधकार घन मेघो का
डर पैदा करता हे दिल में।
उससे भी ज्यादा डरते हैं
जब तड़ित तड़कती बादल में।।
मुक्ति बंधन में भेद नहीं
दोनो आकर्षित करते है
मुक्ति में बंधन शामिल है
वैराग्य उलझता पायल में
कुछ रहा अनकहा कदने में
कुछ नहीं हुआ घटना में भी
कुछ पागलपन विद्वानों में
दर्शन के दर्शन पागल में

संध्या की महत्वकांक्षा

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

संध्या/
शहर की दहलीज पर खड़ी रहती है।
अंदर प्रवेश करने/
लेकिन।
शहर की चमचमाती रोशनी।
उसे प्रवेश नहीं करने देती।
शहर को स्वयं की छटा दिखाने का।
संध्या का सपना अधूरा ही रह जाता है।
शहर में शाम से ही
स्थिर रोशनियों में/
गतिमान रोशनियां दौड़ने लगती है।
और वे।
आप्रभात
दौड़ती रहती है।
सूर्य/
अस्त होने के बाद/
निशा को धरा पर उतरने का अवसर
अवश्य देता है।
पर वह अवसर/
शहर का चमकदार प्रकाश
छीन लेता है।
शहर
आदमी को मशीन बनाने के
कारखाने है/
जो दिन रात चलते है।

होली

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

है धन घर में, चाकू कर में
और शहद तुम्हारी बोली में।
हम सड़क छाप के पास बची
बस गली देने होली में।।

जब लक्ष्मी तुमको ठुकरा दे,
बेलेन्स बैंक का मिटने पर।
लक्ष्मी के दर्शन कर लेना
आकर मेरी हम जोली में।।

तुम लेते रहना जीवन भर,
मेरी रोटी मेरा पैसा।
तुम तंग मत करो, भंग अभी
छलकाती हमें ठिठोली में।।

है महल तुम्हारा शांति निलय
सन्नाटा छाया रहता है।
जीवन जीना हो आ जाना
मेरी छोटी सी खोली में।।

बहुये में पैसे बचते थे
सब्जी आती थी थैल में।
बटुये में सब्जी आती है अब
पैसे जाते है झोली में।

थे पहलवान मेरे साले,
शादी में मुझको यूं भेजा।
पत्नि थी आगे घोड़े पर।
मैं पीछे पीछे डाली में।।

होली का हुडदंग हुआ
हाहा, ही ही, हू हू, हें हैंे।
हल्ला हंगामा हलचल है।
हम हुरियारो की टोली में।।

डा. कौशल किशोर श्रीवास्तव

दिल से निकाला हुआ तराना है।
कुदरत ही मेरा घराना है।।
पी के मैखाना छोड़ देता हँू।
औरो को भी जगह बनाना है
तरन्नुम में भी धमकियाँ जैसे,
आ गई आज क्या जमाना है।।
जाने कब खत्म होगा क्या जाने,
सुनाने लगे वो फसाना है।।
न जाने कौन सी जगह डूबे,
कश्ती हो तो चुकी रवाना है।।
उनकी बातों से चाश्नी टपकी।
गुनाह कोई अब कराना है।।
मुझको थाने से खबर आई है।
हो गया तय कि जैल ताना है।।
एक ही तरीका सियासत का,
हर कदम पर हमें डराना है।।
आदाब करके पैसा ले लोगी।
आप से काम क्या करना है।।
नजूमी बताना है कल मेरा।
आज पैसा उसे कमाना है।।
पी के मै खाना करो तुम खाली
जगह प्यासों को भी बनाना है
धूप आये है मांगने मुझसे
उनकी फसलें उन्हें पकाना है